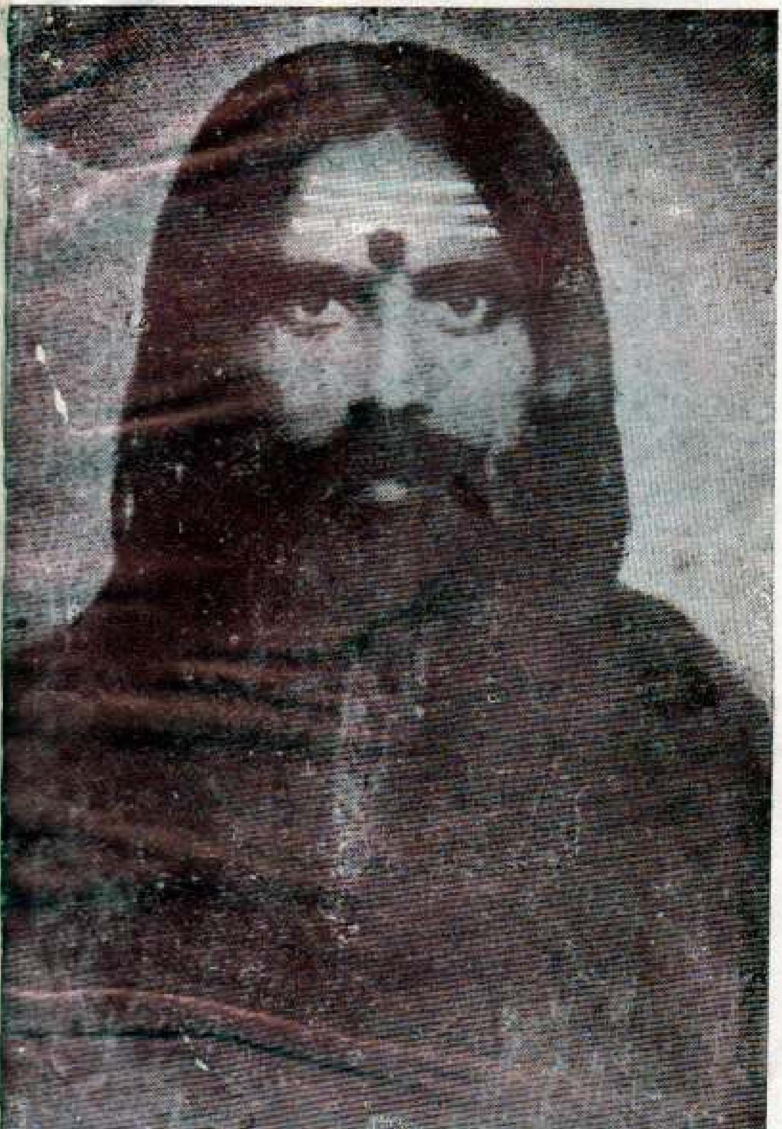

श्री निरञ्जनानन्द नाथ

श्री निरञ्जन ग्रंथमाला – पुष्प २४

# दिव्य-वाणी

आद्य सम्पादक : स्व० श्री क० ला० व्यास 'श्रेयस्'
प्रधान सम्पादक : डा० सूर्यकान्त
संस्करण सम्पादक : श्री मोहन कृष्ण दास

आद्य प्रकाशक :

श्री देवकृष्ण दास
ग्राम+पो०—बेलारही
जिला—मधुबनी (बिहार)

संस्करण प्रकाशक :

डा० बालकृष्ण प्रसाद सिंह शर्मा
४/२०, रोड नं०-१०
राजेन्द्र नगर, पटना-१६

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करण
गुरु पुर्णिमा, सं० २०२६

द्वितीय संस्करण
अग्रहन, सं० २०४१

मुद्रक :

लोकवाणी प्रिंटिंग प्रेस,
नयाटोला, पटना-४
दूरभाष—५४६२८

मूल्य :

पाँच रुपये मात्र

श्री सद्गुरवे नमः

# आत्म-दीप

एक बार राजा जनक ने महर्षि याज्ञवल्क्य के समक्ष-जिज्ञासा प्रकट की। "महाराज ! यदि सूर्य लुप्त हो जाये तो मनुष्य किस ज्योति का आश्रय लेकर जीवित रह सकेगा ?

"चन्द्रमा की ज्योति का आश्रय लेकर" याज्ञवल्क्य ने सहज भाव से उत्तर दिया।

"यदि चन्द्रमा का भी अस्तित्व लोप हो जाय तो फिर मनुष्य किस ज्योति का सहारा ले ?"

"अग्नि-ज्योति का" महर्षि बोले।

यदि अग्नि भी मनुष्य का साथ छोड़ दें तो वह वाणी के अवलम्बन से जीवित रहेगा।

"महर्षि, यदि मनुष्य की वाक्-शक्ति भी नष्ट हो जाये तब वह क्या करे ? जनक ने पुनः प्रश्न किया।

"यदि मनुष्य की वाक्-शक्ति भी न रहे, तब वह आत्मा का आश्रय ले। आत्म-दीप को कोई नहीं बुझा सकता ?

# प्रार्थना

भगवान निरञ्जन भावातीत सर्वमान्य अवधूत हैं। उनके अनुरागियों ने समय-समय पर भगवान रमण महर्षि, भगवान रामकृष्ण, महायोगी अरविन्द, स्वामी शिवानन्द, भगवान निरञ्जन, भगवान आर्यदेव एवं देवी लक्ष्मी आनन्द की दिव्य वाणियों का जो संग्रह किया है उन्हें ही 'दिव्य-वाणी' के रूप में भावावद्ध कर प्रस्तुत किया है। पं० नरेन्द्र झा, श्री महेश प्रसाद, श्रीमती श्यामा देवी एवं अनन्य सहयोगियों का सद्भाव स्तुत्य है। विश्वास है मुमुक्षुगण संग्रह की त्रुटियों को क्षमा करते हुए साधकों में उल्लास का प्रसार करेंगे।

—सूर्यकान्त
अक्षय तृतीया
२०२६

श्री सोमानन्द नाथ

# दिव्य-वाणी

भजनानन्दी जी जनकलाल यादव जी

को सादर समर्पित

# उद्गार

इस शताब्दी में विश्व का कल्पनातीत भौतिक विकास हुआ है। लगता है कि मनुष्य ने वायु, प्रकाश, जल और आकाश सब पर विजय पा ली है।

लेकिन वस्तुतः मनुष्य आज विजयी नहीं है। शायद उसे प्रकृति तथा विश्व के कोटि-कोटि रहस्यों में केवल एकाध का पता लगाने में ही आंशिक सफलता मिली है। और फिर, क्या वह अधिक सुखी हो–सका है? निश्चय ही उत्तर नकारात्मक है। अत्यधिक भौतिक विकास के बावजूद मनुष्य के सुखी न होने का कारण है। मनुष्य का ध्यान आज केवल तन के तात्कालिक सुख पर है, मन के आनन्द पर नहीं। मन के उन्नयन और उत्थान के लिए आज का भौतिक विश्व प्रयत्नशील नहीं है। वस्तुतः मन ही वह नींव है जिसपर आनन्द का महल खड़ा किया जा सकता है। लेकिन दुर्भाग्य की बात है कि क्षणिक शरीर को ही शाश्वत मानकर मनुष्य सब कुछ कर रहा है।

दिग्भ्रमित मानवता को मार्ग-निर्देशन की आवश्यकता है। "दिव्य-वाणी", से यह मार्ग निर्देशन मिलेगा। "दिव्य-वाणी" महापुरुषों की अनुभव जन्य सत्यवाणी है। सौभाग्य से इसके संकलन और सम्पादन का महत् कार्य आदरणीय डा० सूर्यकान्त ठाकुर ने किया है जिनका निर्देशन और आशीर्वाद मुझे सर्वदा मिलता रहा। डा० सूर्यकान्त ठाकुर जी की विद्वत्ता और साधना के क्षेत्र में उनकी उपलब्धियों ने इस पुस्तक को अधिक उपादेय बना दिया है। विषय जितना ही गंभीर है, अभिव्यक्ति उतनी ही सरल। भाषा-शैली की सहजता ने महत् भावों तथा विचारों को साधारण मुमुक्षुओं तथा पाठकों के लिए भी ग्राह्य बना दिया है। दुःखी और दिग्भ्रमित विश्व को आज ऐसे प्रेरणादायक साहित्य की अत्यधिक आवश्यकता है।

साधना का कार्य कठिन जान पड़ सकता है। एक अर्थ में वह कठिन है भी। माया-जाल में फँसा हुआ मनुष्य साधना पर अपना ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाता है। लेकिन इसी माया-जाल से मुक्ति दिलाना इस "दिव्य-वाणी" का उद्देश्य है। किन्तु इस उद्देश्य की पूर्त्ति के लिए

पुस्तक का पारायण मात्र उपयोगी नहीं हो सकता। मनन जरूरी है। मनन के बाद बताये गये मार्ग पर चलना जरूरी है। किसी अच्छे रास्ते पर चलकर ही मनुष्य लक्ष्य तक पहुँच सकता है। अतः केवल आदर पूर्वक पाठ नहीं, दृढ़ निश्चय के साथ बताये गये रास्ते पर चलना, साधना करना आवश्यक है।

--देवीदत्त पोद्दार

भूतपूर्व प्राचार्य

माड़वाड़ी कॉलेज, दरभंगा।

गुरु पूर्णिमा

२०२९

# द्वितीय अंजलि

प्रस्तुत पुस्तक की जनप्रियता से प्रेरित इसका द्वितीय संस्करण आप मुमुक्षुओं के समक्ष है। अन्वयव्यतिरेक के सिद्धान्त पर आधारित "सत्यं, शिवम्, सुन्दरं एवं अद्वैतं" की ओर प्रवाहित सतत धारा जो ललित सुबोध, व्यावाहरिक एवं सूत्रनद्ध-सी है—लोगों को आकर्षित कर पायी है। यद्यपि वस्तु—विन्यास की विविधता अनुक्रमाणिका में लम्बित है पर गणितीय त्रिज्या की तरह केन्द्र की ओर हीं उन्मुख है।

पुस्तक को महात्मा श्री निरंजन द्वारा १९१३ ई० में विरचित "मातृ भूमि वन्दना" (हन्दी में) जो निरंजन-ग्रन्थमाला का सप्तम् पुष्प है तथा जिसे "विहार" मासिक मे अतीत में प्रकाशित किया जा चुका है एवं पूज्य पं० श्री नरेन्द्र झा के सौजन्य से प्राप्त है तथा श्री गुरुचरण जी रचित "गुरु-वन्दना" से अभिवृद्ध किया गया है। इससे पुस्तक की जनप्रियता और बढ़ेगी—ऐसी आशा है।

इस पुस्तक के आदि—प्रकाशक तथा श्री निरंजन—ग्रन्थमाला के प्रकाशन में गतिशीलता लानेवाले पूज्य महात्मा श्री देवकृष्ण दासजी तथा उनकी धर्मपत्नी श्रीमती गीता देवी का युग्म चित्र संलग्न है। उन्होंने श्री चरण की शरणागति पायी और "वृद्धा शिष्याः गुरोर्युवा" के वैशिष्य की पुष्टि की। प्रसादात् उनकी हीं पुस्तक में पूजित हैं। यह हर्षातिरेक प्रदान करता है।

आशा है पाठक वृन्द हमारे इस प्रयास के लिये विगत की तरह आगे भी उत्साहित करेंगे। मुद्रण—जन्य अशुद्धियों के लिए क्षमा प्रार्थी हूँ।

विनीत

(डॉ०) बालकृष्ण प्रसाद सिंह शर्मा

# क्षमा याचना

'दिव्यवाणी' पूज्यपाद श्री १०८ बाबा के कृपा प्रसाद की ही मूर्त्ति है जिसमें वेदान्त-प्रतिपादित सिद्धान्त को स्वानुभूति योग से युक्त कर जीवन में ढालने के लिए हमलोगों का सुलभ पथ है। भाषा सरल और सुबोध है। इसके गूढ़ रहस्य सद्गुरु कृपा के आश्रित हैं। पूज्यपाद श्री १०८ बाबा से मैंने बार-बार आग्रह कर जनहित के लिए भिक्षा माँगी थी। उन्होंने प्रसाद दिया। शरीर अस्वस्थ था, फिर भी उन्होंने कष्ट उठाया। क्षमा चाहता हूँ। 'दिव्य वाणी' की छपाई के कार्यक्रम में श्रीमान् देवीदत् जी पोद्दार का अथक श्रम स्तुत्य है। उन्हें कष्ट के लिए साधुवाद है, श्रद्धा सुमन समर्पित है। डॉ० श्री इन्द्रदेव नारायण सिंह का आभारी हूँ जिन्होंने भगवान का फोटो देकर कृतार्थ किया है।

मुद्रण की कतिपय अशुद्धियों के लिए साधकों से क्षमा चाहता हूँ।

विश्वास है मुमुक्षुगण त्रुटियों को सुधार कर पढ़ने की कृपा करेंगे। अपनी त्रुटियों के लिए बारम्बार क्षमा प्रार्थी हूँ।

विनीत

देवकृष्ण

# -: अणुक्रमणिका :-


| विषय | | | पृष्ठ सं० |
|---|---|---|---|
| मातृभूमि वन्दना | ... | ... | १ |
| गुरु वन्दना | ... | ... | ५ |
| योग | ... | ... | ६ |
| योग और ज्ञान | ... | ... | ७ |
| योग का आधार | ... | ... | ८ |
| शिष्य-चयन | ... | ... | ६ |
| ब्रह्मचर्य के आठ अंग | ... | ... | ६ |
| ब्रह्मचर्य के सहायक अग | ... | | १० |
| साधन चतुष्टय | ... | ... | १० |
| नैतिक-नियम | ... | ... | ११ |
| धर्म | ... | ... | १२ |
| योग की पृष्ठभूमि | ... | ... | १२ |
| दुर्वृत्तियों को नष्ट करने हेतु | ... | ... | १३ |
| त्राटक | ... | ... | १३ |
| भक्ति क्या है | ... | ... | १४ |
| भक्ति का फल | ... | ... | १४ |
| भक्ति के लक्षण | ... | ... | १५ |
| जप | ... | ... | १५ |
| हठयोग | ... | ... | १६ |
| सुख पूर्वक प्राणायाम | ... | ... | १६ |
| भस्त्रिका प्राणायाम | ... | ... | १६ |
| शीतली प्राणायाम | ... | ... | १६ |
| महामुद्रा | ... | ... | १६ |
| उड्डीयान बन्ध | ... | ... | १६ |
| मन और इसकी क्रियायें | ... | ... | १७ |
| साधना का सार | ... | ... | १७ |
| मन का विकास | ... | ... | १८ |

| विषय | | | पृष्ठ सं० |
|---|---|---|---|
| ज्ञानी का मन | ... | ... | १९ |
| मन: पहचान | ... | ... | २० |
| उतावला मन | ... | ... | २० |
| शिशु का दृष्टान्त | ... | ... | २१ |
| मतवाला सांड़ | ... | ... | २१ |
| मत्त घोड़े का दृष्टान्त | ... | ... | २२ |
| स्थिति-प्रश्न | ... | ... | २३ |
| भ्रमण शील मन का नियन्त्रण | ... | ... | २३ |
| धारणा | ... | ... | २४ |
| विचार मंथन | ... | ... | २५ |
| ध्यान का स्थान | ... | ... | २५ |
| ब्राह्म मुहूर्त | ... | ... | २६ |
| ध्यान कक्ष | ... | ... | २६ |
| ध्यान समय | ... | ... | २७ |
| ध्यान-प्रारम्भ | .. | ... | २८ |
| ध्यान-शिक्षण | ... | ... | २९ |
| गुलाब पर ध्यान | ... | ... | ३१ |
| विराट पुरुष पर ध्यान | ... | ... | ३२ |
| दिव्य संगीतों पर ध्यान | ... | ... | ३२ |
| गीता के श्लोकों पर ध्यान | ... | ... | ३२ |
| गायत्री पर ध्यान | ... | ... | ३३ |
| महा वाक्यों पर ध्यान | ... | ... | ३४ |
| अहं ब्रह्मास्मि पर ध्यान | ... | ... | ३५ |
| श्वास प्रश्वास में ध्यान | ... | ... | ३५ |
| सोऽहं पर ध्यान | ... | ... | ३६ |
| सगुण ध्यान | ... | ... | ३६ |
| निर्गुण ध्यान | ... | ... | ३७ |
| निर्विकल्प समाधि | ... | ... | ३९ |
| सगुण उपासक | ... | ... | ३९ |
| निर्गुण उपासक | ... | ... | ३९ |
| विशेष साधना | ... | ... | ४० |

| विषय | | | पृष्ठ सं० |
|---|---|---|---|
| मौन | ... | ... | ४० |
| अन्तरंग साधना | ... | ... | ४० |
| स्वर साधना | ... | ... | ४१ |
| धारा बदलना | ... | ... | ४२ |
| लम्बिका योग | ... | ... | ४२ |
| लय योग | ... | ... | ४३ |
| अनाहत नाद | ... | ... | ४३ |
| लिखित जप योग | ... | ... | ४४ |
| महायोग | ... | ... | ४५ |
| मन्त्रयोग | ... | ... | ४५ |
| नमस्कार-योग | ... | ... | ४५ |
| नाद योग | ... | ... | ४५ |
| उर्ध्वरेता-योग | ... | ... | ४५ |
| प्राकृतिक-योग | ... | ... | ४५ |
| प्रपत्ति-योग | ... | ... | ४६ |
| प्रेम-योग | ... | ... | ४६ |
| पूर्ण-योग | ... | ... | ४६ |
| राज-योग | ... | ... | ४६ |
| समाधि-योग | ... | ... | ४७ |
| समत्व-योग | ... | ... | ४७ |
| सांख्य-योग | ... | ... | ४७ |
| ज्ञानी | ... | ... | ४७ |
| सविकल्प समाधि | ... | ... | ४८ |
| निर्विकल्प समाधि | ... | ... | ४८ |
| रहस्य मय-अनुभव | ... | ... | ४९ |
| मन घूमता है | ... | ... | ४९ |
| पृथक होने की भावना | ... | ... | ४९ |
| कैवल्य | ... | ... | ५० |
| आकाश भ्रमण | ... | ... | ५० |
| ध्यान में ज्योति दर्शन | ... | ... | ५० |
| चकाचौंध करने वाली ज्योति | ... | ... | ५२ |

| विषय | | | पृष्ठ सं० |
|---|---|---|---|
| मंत्र-योग | ... | ... | ५३ |
| मंत्रों का व्यवहार | ... | ... | ५३ |
| साधक का शरीर | ... | ... | ५५ |
| उच्चारण | ... | ... | ५५ |
| शब्द ब्रह्म | ... | ... | ५५ |
| अनुभव की रीति | ... | ... | ५५ |
| आनन्द | ... | ... | ५५ |
| ज्ञान मार्ग | ... | ... | ५६ |
| कर्म | ... | ... | ५६ |
| समाधि | ... | ... | ५६ |
| एकांत | ... | ... | ५६ |
| मौन | ... | ... | ५६ |
| मन को चैन | ... | ... | ५६ |
| ॐ | ... | ... | ५७ |
| नाद पर ध्यान | ... | ... | ५७ |
| मन की परीक्षा | ... | ... | ५८ |
| गुरु | ... | ... | ५९ |
| आत्म-उपलब्धि में विलम्ब के कारण | ... | ... | ५९ |
| निरन्तर ध्यान | ... | ... | ६० |
| समष्टि और व्यष्टि | ... | ... | ६० |
| भिखारी शिव | ... | ... | ६० |
| श्रवण | | ... | ६१ |
| मनन | ... | ... | ६१ |
| निदिध्यासन | ... | ... | ६१ |
| जीवन्मुक्त | ... | ... | ६१ |
| धीर | ... | ... | ६२ |
| तुरीय | ... | ... | ६२ |
| तत्त्वमसि | ... | ... | ६३ |
| प्रत्यभिज्ञा | ... | ... | ६३ |
| योग-हृदय | ... | ... | ६४ |
| रसास्वादन | ... | ... | ६५ |

| विषय | | | पृष्ठ सं० |
|---|---|---|---|
| मौन दीक्षा | ... | ... | ६५ |
| जीवन मुक्तों का जीवन | ... | ... | ६५ |
| परीक्षित का जन्म | ... | ... | ६६ |
| सच्चिदानन्द | ... | ... | ६६ |
| अविद्या | ... | ... | ६६ |
| त्रिगुण | — | ... | ६७ |
| अज्ञान | — | ... | ६७ |


*
* *

पत्नी पुज्या श्री गीता देवी के साथ महात्मा श्री देव कृष्ण

हे जननी ! तू धन्य है।
तुमसा न कोई अन्य है।

भक्तों में वयोवृद्धि कहते तिहत्तर के हैं,
……ऋद्धि-सिद्धि भक्ति-सिद्धि उनके सुपास हैं।

—सोमानन्द

# मातृभूमि-वन्दना

(झाड़ की धुन–पंजाबी ठेका)

हे……मातृभूमि ! वन्दन ॥
प्रतापी भारत भव्य वतन !
हे …… मातृभूमि ! वन्दन ॥१॥

अजर अमर संस्कृति की जननी ! बारम्बार नमन ।
हे……मातृभूमि ! वन्दन ॥२॥

नगाधीश शिर मुकुट भाल पर, कश्मीरी चन्दन !
हंस-विलास विमल मानस-सर; मद-सुरभित मृग-वृन्द ॥
हे…… मातृभूमि ! वन्दन ॥३॥

व्योम-छत्र रवि, शशि छवि रंजित, हीरक तारक पुञ्ज ।
गगन गंग तव माँग पनपते; कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड ॥
हे ……मातृभूमि ! वन्दन ॥४॥

कर त्रिशूल त्रिरंग पताका; बल प्रचण्ड भुजदण्ड ।
वरुण पखारत चरण चण्डिके; अरुण पद्मलोचन ॥
हे ……मातृभूमि ! वन्दन ॥५॥

गिरि, निर्झर, सर-सरित तीर ! शीतल समीर पुलकन
प्रबल पवन उच्छृत पयनिधि-ध्वनि; पग पायल 'रुन झुन'
हे……मातृभूमि ! वन्दन ॥६॥

जननी पय-पीयूष पान; प्रमुदित वक्ष-शतदल कञ्ज ।
पंचदेव प्रासाद सुचेतन; सुर दुर्लभ नर-तन ॥
हे……मातृभूमि ! वन्दन ॥७॥

देव-ऋषि वीणा स्वर के; साक्षी आकाश पवन ।
सृजन पुराण पुनीत गाथाएँ ; गाते गंग तरंग ॥
हे……मातृभूमि ! वन्दन ॥८॥

राम, कृष्ण, अरहत, बुद्ध, शङ्कर, जगती-जल-चैतन्य ।
सीता, व्रज-ललिता, गौतमी, द्रुपद-सुता पावन ॥
हे……मातृभूमि ! वन्दन ॥९॥

गार्गी, मैत्रेयी, मदालसा; अनुपम ज्ञान वचन।
बाल्मीकि, व्यास, बशिष्ठ, पराशर; शुक, भार्गव, गौतम ।।
हे ·· मातृभूमि ! वन्दन ।।१०।।

जनक, भीष्म, कौन्तेय, हली; उद्धव, उज्ज्वल जीवन ।
भरद्वाज, भृगु, भागीरथ; याज्ञवल्क्य, योगीन्द्र ।।
हे······मातृभूमि ! वन्दन ।।११।।

कपिल, कणाद, अगस्त्य, अंगिरा; भरत मृकण्ड-सुवन ।
शेव, भरत, वागीश-पा णनी; पिङ्गल-छन्द-प्रबन्ध ।।
हे······मातृभूमि ! वन्दन ।।१२।।

(पंतजलि वागीश पाणिनी पिंगल छन्द प्रबन्ध ।
भास्कर जैमिनी गर्ग भरत नाट्यकला नवरंग ।।
हे ·····मातृभूमि ! वन्दन ।।१२।।)—(पाठान्तर से)

विदुर, प्रह्लाद, मोरध्वज; औ अम्बरीष, हरिचन्द ।
जह्नु, परीक्षित, जनमेजय औ, नाग, गुप्त प्रजनन ।।
हे······मातृभूमि ! वन्दन ।।१३।।

कुटिल, कनिष्क, अशोक, सुविक्रम, शकी शालिवाहन ।
दर्शन सिद्ध महाज्योतिर्धर; इतिवृत्त आभूषण ।।
हे····· मातृभूमि ! वन्दन ।।१४।।

गौड़, सोम, अभिनव, कुमारिल, विरूपाक्ष, गोविन्द ।
सारिपुत्र, मुग्गल, दीपङ्कर, अश्व, नाग, अर्जुन ।।
हे····· मातृभूमि ! वन्दन ।।१५।।

गोरख, गोपी, मीन, भर्तृहरि; अलख-ब्रह्म-साधन ।
माघ-बाण, श्रीहर्ष भूति औ; कालीदास कवीन्द्र ।।
हे ···· मातृभूमि ! वन्दन ।।१६।।

भास, भारती, आर्यमिहिर जयदेव रसिक गुञ्जन ।
नानक, तुलसी, सूर, विद्यापति, कबीर, चण्डी, चन्द ।।
हे····· मातृभूमि ! वन्दन ।।१७।।

सच्चिसुत, तिरु, त्यागी, रवि, गोविन्द, लतीफ, रामानन्द ।
"अहं ब्रह्म" वेदान्त 'अनलहक' सूफी वाइज बुलन्द ।।
हे ····मातृभूमि ! वन्दन ।।१८।।

मसीह्-मंदिर बंधु पारसी; आतिश-आराधन।
जिनकी जैसी नजर निरञ्जन; वैसा रटन-भजन॥
हे ···मातृभूमि ! वन्दन॥१९॥

विभु-विभोर मीरा मतवाली; भक्त तुका, नरसिंह।
रोम-रोम झंकार नृत्य नित; तम्बुर ताल मृदङ्ग॥
हे ·····मातृभूमि ! वन्दन॥२०॥

वन-वन में वनराज गरजते, मदोन्मत्त गजझुण्ड।
सुभट विकट संग्रामसिंह, भैरव कबन्ध नर्त्तन॥
हे ······मातृभूमि ! वन्दन॥२१॥

पृथ्वी, छत्र, प्रताप, शिवा; रणजीत वीर भूषण।
दुर्गा रणचण्डी लक्ष्मी की; तेज तड़ित-कौंधन॥
हे ····मातृभूमि ! वन्दन॥२२॥

हेम, कुन्द, रामानुज, वल्लभ, भास्कर, ब्रह्मानन्द।
ज्ञान, राम, आचार्य त्रिविक्रम रामतीर्थ मॅकण॥
हे ···मातृभूमि ! वन्दन॥२३॥

रामकृष्ण, अरविन्द, रमण, हरिहर औ तैलङ्ग।
तारण तरन महा मानवकुल; धन्य-धन्य जीवन॥
हे ······मातृभूमि ! वन्दन॥२४॥

विरल विभूति मोहन के तप; सत्य शङ्ख गर्जन।
शील अहिंसा विश्वशान्ति, संदेश देश-रंजन॥
हे ·····मातृभूमि ! वन्दन॥२५॥

उत्तर, विन्ध्य, पंजाब, कामरू; बिहार, बङ्ग, कलिङ्ग।
केरल, मद्र, मध्य, महीसुर; महाराष्ट्र, गोकर्ण॥
हे ·····मातृभूमि ! वन्दन॥२६॥

नाग, विदर्भ, महागुर्जरगण; मद-निर्झर मातङ्ग।
सोरठ, कच्छ-कनक, राजस्थल, केसरिया रण रंग॥
हे ······मातृभूमि ! वन्दन॥२७॥

काञ्ची, प्रयाग, पुरी, अयोध्या; काशी हृदय-रतन।
माया, मिथिला, मथुर, अवन्ती; वैशाली सोभन॥
हे ······मातृभूमि ! वन्दन॥२८॥

सिन्धु कच्छ द्वारा याद हैं, यादव के सुगमन।
री वसुन्धरे! वक्षस्थल पर, चरण-रेणु-चन्दन॥
हे······मातृभूमि! वन्दन॥२९॥

विज्ञान-ज्ञान बुधजन प्रतिमा की ज्वालामुखि धधकन।
समर-शूर शरणागत रक्षक माँ! तेरे महाजन॥
हे······मातृभूमि! वन्दन॥३०॥

लवे रत्न से देश-देश के नाचें जलधि तरङ्ग।
मल्लकाय मल्लाह नाव से, लाँघें सिन्धु दिगन्त॥
हे······मातृभूमि! वन्दन॥३१॥

खनिज रसायन रत्न चमकते, रजत कनक के कण।
मधुमीठे फल कल्पवृक्ष दें, अमिय दूध गोधन॥
हे······मातृभूमि! वन्दन॥३२॥

दूर-सुदूर प्रवासी पंछी; हिय स्वदेश चिन्तन।
प्रिय दर्शन अभिलाषी, बरबस बरसत नीर नयन॥
हे··· मातृभूमि! वन्दन॥३३॥

तेज पुञ्ज लक्ष्मी ललना, साकार रूप पावन।
कोमल दीप-शिखा जननी हिय-मन्दिर जले ज्वलन्त॥
हे······मातृभूमि! वन्दन॥३४॥

कलाकार, कवि, कोविद, गायक, सन्त, महन्त अनन्त।
यशोगान रत थके विरञ्ची; शारद शेष वचन॥
हे मातृभूमि! वन्दन॥३५॥

अभिवादन नवभारत हे! चिर-संस्कृति के धनवन्त।
अभिवादन हे जन्मभूमि! भारत के अङ्ग अखण्ड॥
हे······मातृभूमि! वन्दन॥३६॥

अलख निरञ्जन जयति भारती; चिर स्वतन्त्र गणतन्त्र।
कुल मानव कुल कोकिल तेरे; तू नन्दन कानन॥
हे······मातृभूमि! वन्दन॥३७॥

# गुरु-वन्दना

गुरुदेव मुझे अब तो
बस एक ही वर दे दो।
इस जीवन मृत्यु से अब
मुक्त मुझे कर दो।।
जीवन की लीलायें
कुछ ऐसी हैं उलझी।
अब तू ही इने सुलझा कि
ये फिर न उलझ पायें।।
सत्पथ से डिगूँ न कभी
और गम से न घबड़ाऊँ।
हे नाथ! दया करके
अब येहीं अभय वर दो।।
कई बार जनम लेकर
यों हीं व्यर्थ बिताया मैं।
सौ बार के जन्मों को
इस बार सफल कर दो।।
'सत्' का संग जीवन में
एक बार हीं होता है।
हे सद्गुरु! अब तो मुझे
चरणों में शरण दे दो।।
हे सद्गुरु! अब तो मुझे
चरणों में ही रहने दो।।

—गुरु चरण

# योग

**योग**—संस्कृत में 'युज' जोड़ने के अर्थ में आता है। आध्यात्मिक अर्थ में आत्मा + परमात्मा का ऐक्य है।

प्रभु से मिलन है योग।

यह लक्ष्य है मानव जीवन का।

यह एक अध्यात्म विज्ञान है जो मानवीय शक्ति को प्रभु से मिलन बताता है।

योग एक दिव्य विज्ञान है जो जीव को भवपाश एवं बाहरी पदार्थों से छुड़ाकर परमसत्य से सम्बन्ध लगाता है।

सामरस्य है योग।
ब्रह्म से ऐक्य है योग।
योग ब्रह्म में वास है।

योग एकता है, समरसता है, ब्रह्म के साथ वही है। पतञ्जलियोग शास्त्र में कहा है :—

**"मिलन के समय में ऋषि (पुरुष) अपनी शुद्ध अवस्था में विश्राम करता है।"**

**दत्तात्रेय संहिता में है :**

**सर्व चिन्ता परित्यागात् निश्चिन्त योग उच्यते।**

सभी चिन्ताओं एवं संकल्प-विकल्प का त्याग ही योग है। और है—

**योग समाधि : समतावस्था जीवात्म परमात्मनो :**

जीवात्मा ब्रह्म-समान हो जाता है, वही योग है। भगवद्गीता कहती है :—
योग: **कर्मसु कौशलम् समत्वं योग उच्यते।**

योग से निम्न योगों का मोटामोटी संकेत मिलता है। भक्तियोग, राजयोग, ज्ञानयोग, हठयोग, मन्त्रयोग, लययोग। **विशेष रूप में यह अष्टाङ्गयोग या राजयोग है पतञ्जलि का।**

योगी वही है जिसने सर्वोच्च समाधि पा ली हो।

# योग और ज्ञान

ज्ञान योग राजपथ है और वेदान्त में सर्वत्र मान्य है। योग्य-आचार्य से वेदान्त वाक्यों का श्रवण इसकी प्रारम्भिक अवस्था है। उपनिषदों से ब्रह्म का यथार्थ ज्ञान मिलता है। आदि से अन्त तक योग्य आचार्य द्वारा इसे सुनने से ब्रह्म और व्यक्तिगत आत्मा के ऐक्य—स्थापन की महत्ता का पता चलता है : दूसरी अवस्था है :—

**जो सुना है उसे बुद्धि द्वारा निश्चय पाना**—जिससे, सभी जिज्ञासायें, शंकायें हट जाती हैं। आत्मा पर गहरा ध्यान करने से अनुभूति मिलती है। निरन्तर ध्यान से विपरीत धारणायें हट जाती हैं। ब्रह्म के शाश्वत भाव की अनुभूति होते ही माया एवं उससे उत्पन्न सभी पदार्थ गौण पड़ जाते हैं। लक्ष्य भी निकट आ जाता है और साधक परमहंस बन जाता है।

## मुण्डक उपनिषद् में है :—

ब्रह्म को सर्वत्र महान् से महान् और अणु से अणु रूप में देखने पर हमारे हृदय की सभी ग्रंथियाँ खुल जाती हैं, सभी दुःख खण्डित हो जाते हैं, सभी शंकायें मिट जाती हैं और हमारे कार्य शून्य हो जाते हैं।

योगी चित्तवृत्ति निरोध करते हैं।

ज्ञानी ने तो इसे पहले ही शान्त, शम कर लिया है। ब्रह्माकार वृत्ति से वह ब्रह्म में विचरण करता है।

**तत् त्वं असि, अहं ब्रह्मास्मि**—को सुनकर उसकी ब्राह्मी स्थिति रहती है। यह ब्रह्माकार वृत्ति सात्विकता में ढलना है। अन्तःकरण सात्विक रहने का परिणाम है। ज्ञानी मन की वृत्तियों का साक्षी या मौन गवाह रहता है। मन और देह के संग यंत्रवत् भाव रखता है। योगी जाग्रत में माया से प्रभावित होता है। ज्ञानी को आसन की जरूरत नहीं। चलते फिरते भी चैतन्य-समाधि में रहता है। योगी समाधि में कार्य न भी करे, पर ज्ञानी करते हैं।

**ज्ञानी सदा समाधि में रहते हैं।**

**राजयोगी बुद्धि और इच्छा से चलते हैं; सीधा आत्मा से चलते हैं।**

ज्ञानी 'नेति-नेति' के सवितर्क भाव से चलते हैं—मैं यह नहीं हूं—नहीं हूं यह, यह शरीर मैं नहीं हूं—यह मन मैं नहीं हूं।

**मैं सच्चिदानन्द हूं; अहं ब्रह्मास्मि**—भ्रमरकीट न्याय से वह निरन्तर एवं सतत सोचता है कि "मैं ब्रह्म ही हूं" और वह ब्रह्म ही हो जाता है।

राजयोगी सभी वृत्तियों को एक वृत्त मे बदल देता है—सविकल्प समाधि में—फिर वह अन्तिमवृत्ति छोड़कर निर्विकल्प समाधि में प्रवेश कर **ब्रह्मानुभूति** पाता है।

**ज्ञानी सहजमुक्ति पाता है।**
**योगी चक्र से चक्र होकर क्रमबद्ध जाता है।**
**शुद्ध ब्रह्म के एक स्थल पर दोनों मिलते हैं।**

# योग का आधार

## गुरु की प्रयोजनीयता

**तद्विद्धि प्रणिपातेन परि प्रश्नेन सेवया**
**उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनः तत्त्वदर्शिनः।**

—गीता, ४–३४

सेवा से, प्रणत भाव से, जिज्ञासा से प्रश्न करने पर तत्त्वदर्शी ज्ञानी उस ज्ञान का उपदेश करते हैं : **योगवाशिष्ठ में है—**

सच्चे जिज्ञासुओं को गुरुवाक्य से आत्मज्ञान होता है। गुरु-कृपा रहस्यमय ढंग से शिष्य को ब्रह्म तत्व का बोध देती है। **आचार्य, ज्ञान-शास्त्र और सच्चा शिष्य**—इन तीनों का मिलना दुर्लभ है। यदि तीनों मिल जाँय तो बन्धन से ऊपर का पद अवश्य मिल पाता है। सद्गुरु अविद्या का आवरण हटा देते हैं। गुरु से मिलने के पहले आप निर्मल होकर निष्काम कर्मयोग, यम और नियम से पवित्र बनें।

जीवभाव से मुक्त रहें।
शास्त्र मार्ग दिखाता है।
गुरु ब्रह्मरूप दिखाते हैं।
आपका उद्यम ब्रह्म साक्षात्कार कराता है।
निरन्तर निदिध्यासन में लगना है।
दिव्यशक्ति से स्वयं सच्चिदानन्द का स्वाद लेंगे।
शास्त्र श्रवण, मनन और निदिध्यासन बताते हैं।
श्रवण, गुरु वाक्यों का मनन और निदिध्यासन शिष्य का प्रयास है।

× × ×

आत्मा को नीचे से ऊपर उठायें।
आत्मा को अवसाद न दें।

—गीता ६–५

## शिष्य चयन

१. जिनमें वेदान्त संस्कार हों।
२. अन्तर्मुखी वृत्ति हो।
३. मोक्ष प्रयत्नता हो।
ये तीनों शीघ्र तत्व-ग्रहण करेंगे।

**अवधूत गीता एवं विवेक चूड़ामणि—ग्रंथ देखें।**

१. शास्त्रों में विश्वास, महावाक्यों **'तत्वमसि'**
**'अहं ब्रह्मास्मि'**— में श्रद्धा
बिना श्रवण-मनन के ज्ञान योग असंभव है।

२. **ब्रह्मचर्य्य—रसो वैस :**
भगवान रस हैं—वीर्य है

**आचार : प्रथमो धर्म :**
इससे चरित्र-निर्माण होता है, दीर्घ जीवन मिलता है।

## ब्रह्मचर्य के आठ अंग

### आप इन आठों को छोड़ें :—

१. **दर्शन**—किसी नारी को वासना से देखना
२. **स्पर्शन**—उसे स्पर्श करना
३. **केलि**—उससे खेलना
४. **कीर्तन**—उसका गुण किसी से बखानना
५. **गुह्य-भाषण**—एकान्त में उससे ब तें करना
६. **संकल्प**—उसके विषय में सोचना, याद करना
७. **अध्यवसाय**—उसके संग की तीव्र भावना
८. **क्रिया-निवृत्ति**—उसका संग करना

**मात्र ऋतुकाल में अपनी स्त्री से सहवास करने वाला, सन्तान के लिए ही ऐसा करने वाला आदर्श गृहस्थ ब्रह्मचारी कहा गया है।**

४० बूंद रक्त से एक बूंद वीर्य बनता है।
वीर्य ही शक्ति है, धन है, प्रभु है, सीता है, राधा है।
यह आत्म-बल है।
"**पौरुषं नृषु**"—गीता में है—यह प्रभु की विभूति है।

एक बार नष्ट हो जाने से यह किसी प्रकार के दूध, मक्खन, या च्यवनप्राश या मकरध्वज से पूरा नहीं हो सकता।

आप इस वीर्य की रक्षा करें।

**उर्ध्वरेता बनें।**

**उर्ध्वरेताओं में यह शक्ति अध्यात्म शक्ति बन जाती है।**

उर्ध्वरेताओं को स्वप्न-दोष नहीं होता है।

योगी योगचक्षु से प्रकृति के रहस्य को देखते हैं।

**ब्रह्मचर्य**—शारीरिक और मानसिक होता है।

मानस-ब्रह्मचर्य उच्च रहता है।

## ब्रह्मचर्य के सहायक अंग

| | | |
|---|---|---|
| १. | **जप** | गीता अध्ययन |
| २. | **आसन** | रामायण अध्ययन |
| ३. | **प्राणायाम** | सात्विक भोजन |
| ४. | **प्रत्याहार** | कीर्त्तन |
| ५. | **धारणा** | मन को कार्य में संलग्न रखना |
| ६. | **शम** | प्रार्थना |
| ७. | **दम** | विचार |
| ८. | **मिताहार** | —नमक छोड़ना—वैराग्य |

**विविदिशा संन्यास**—तत्त्वज्ञान के लिए संन्यास

**विद्वत-संन्यास**—तत्त्व या ब्रह्म ज्ञानियों का संन्यास

## साधन चतुष्टय

एक साधक में चार गुण होने हैं—

**१. विवेक** २. **वैराग्य** ३. **षट्सम्पत्ति** ४. **मुमुक्षत्व।**

### विवेक

**आत्म**–अनात्म का विवेचन

**सत्**–असत् ,, ,,

**नित्य**–अनित्य का विवेचन

**दृक्**–दृश्य ,, ,, ही विवेक है।

**ये** निष्काम कर्म के द्वारा होंगे।

## वैराग्य

भोगों के प्रति उदासीनता रहनी है।

विवेकपूर्ण वैराग्य प्रशंसनीय है।

**ब्रह्म सत्यं जगत् मिथ्या जीवो ब्रह्म एव न अपर;**
**वैराग्यस्य फलं बोधं बोधस्य उपरति फलं ॥**

## वैराग्य के चार प्रकार

मृदु

मध्यम

अधिमात्रा

पर—यह ब्रह्मज्ञान के बाद आता है।

## ये षट् सम्पत्ति हैं :—

१. शम—मन की शान्ति है। मन वश में हो।
२. दम-आत्म-संयम है। इन्द्रिय वश में हो।
३. तितिक्षा—दुःख-सुख में संतुलन।
४. उपरति—अनासक्त भाव
५. समाधान—आत्म-निश्चयता और ध्यान।
६. श्रद्धा—शास्त्र और गुरुवाक्य में विश्वास।

## मुमुक्षत्व

मोक्ष की तीव्र इच्छा ही मुमुक्षत्व है।

# नैतिक-नियम

आत्मा सब वस्तुओं का आधार है।

आत्मा और इच्छा में निकट का सम्बन्ध है।

सक्रिय या व्यक्त ईश्वर का प्रतीक इच्छा है।

यम राजयोग की पहली सीढ़ी है।

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह—यम के अंग हैं।

इस नियमन से ही "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" के वेदान्त वाक्य का आधार दृढ़ होता है।

## धर्म

**वैशेषिक सूत्र में है :—**

निःश्रेयस् और अभ्युदय जिससे सिद्ध हो वही **धर्म** है।

"भगवान को जो निकट लाता है वह **धर्म** है"

## योग की पृष्ठभूमि

पवित्रता—योग का प्रथम भाग है।

राजयोग में—महर्षि पतञ्जलि द्वारा क्रिया योग का उल्लेख है :—

**तप: स्वाध्याय ईश्वर प्राणिधानानि क्रिया योगः तप या मृत्वत्,** स्वाध्याय और कर्म फल भगवान को अर्पण करना—क्रियायोग है।

यम
नियम
आसन
प्राणायाम
— **तप में आते हैं**

धौति
भस्ति
नेति
त्राटक
नौलि
कपालभाति
— **हठ योग में शुद्धि के छः माध्यम हैं**

**क्रियायोग से मन शान्त होकर समाधि योग्य बनता है।**

यम और नियम—योग के आधार हैं—राजयोग के आधार हैं। वैसे ही विवेक और वैराग्य ज्ञान योग के।

**आप समाधि चाहते हैं तो ध्यान को पूरा जानें।**

| | |
|---|---|
| " ध्यान " | धारणा " " |
| " धारणा " | प्रत्याहार " " |
| " प्रत्याहार " | आसन " " |
| " आसन " | यम+नियम " |

एकाएक ध्यान में कूद पड़ने से लाभ नहीं।

**ऐसे ही—ज्ञानयोग में**

आप साक्षात्कार चाहते हैं तो निदिध्यासन जानें

" निदिध्यासन " " मनन "

" मनन " " श्रवण "

" श्रवण " " मुमुक्षत्व "

" मुमुक्षत्व " " समाधान "

" श्रद्धा " " उपरति "

" उपरति " " तितिक्षा, दम, शम "

इन सबों को पाने के लिए वैराग्य चाहिये ।

विवेक और वैराग्य—आधार हैं ।

**दुर्वृत्तियों को नष्ट करने हेतु—**

**मैत्री**

**करुणा**

**मुदिता**

**उपेक्षा**

**सुख**

**दुःख पुण्य अपुण्य विषयानां भावनातश्चित्तप्रसादनम्**

दान, संत-सेवा—दरिद्र-सेवा से नारायण को प्रसन्न करें ।

संसार में ब्रह्म का सर्वत्व है ।

अतः संसार ब्रह्म से भिन्न नहीं है ।

## त्राटक

किसी बिन्दु या वस्तु पर अपलक दृष्टि ही त्राटक है । ध्यान में सहायक है । यद्यपि यह हठयोग के षट्कर्मों में एक है, फिर भी राजयोग, भक्तियोग और ज्ञानयोग के जिज्ञासुओं के लिए भी उपादेय है ।

**मन वशीभूत होता है ।**

**आंखों की दृष्टि-शक्ति बढ़ती है ।**

**इच्छा-शक्ति का विकास होता है ।**

**विक्षेप नष्ट होता है।**
**दूर-दृष्टि-शक्ति बढ़ती है।**
**विचार पढ़ना आता है।**
**मनोवैज्ञानिक शक्ति बढ़ती है।**
**अन्य सिद्धियाँ मिलती हैं।**

भगवान की मूर्त्ति पर या ॐ पर या **भ्रू-मध्य** में, **अंतःचक्र** में, **सूर्य**, **तारा**—किसी पर त्राटक कर सकते हैं।

## भक्ति क्या है

ईश्वर प्रणिधान एक प्रकार का भक्तियोग है। भगवान के चरण कमल से भक्त के हृदय को जोड़ने वाला रेशमी धागा है—वही भक्ति है।

भगवान में अनन्य श्रद्धा और अनुराग है भक्ति।

भगवान के लिए परम प्रेम है भक्ति।

प्रेमी के लिए सद्यः प्रस्फुटित धारा है भक्ति।

भक्ति शुद्धा है, निःस्वार्थ है, दिव्य प्रेम है या शुद्ध प्रेम है।

यह प्रेम के लिए ही प्रेम है।

इसमें कोई शर्त नहीं है या आशा नहीं है।

उच्च भावनाओं को शब्द नहीं व्यक्त कर सकते।

यह प्रेमी भक्त नहीं जानता है।

कोमल भावनाओं की उच्च रेखा है भक्ति, जो भक्त और भगवान को जोड़ती है।

## भक्ति का फल

भक्ति हृदय को कोमल करती है, अहंकार हटाती है। भक्त का जन्म-मरण का चक्र छूट जाता है।

वह शान्ति, आनन्द और ज्ञान का धाम पाता है।

## भक्त के लक्षण

**वह समदृष्टि रखता है।**
**किसी से शत्रुभाव नहीं रखता।**
**उसका चरित्र उदाहरण रहता है।**

किसी वस्तु की आसक्ति नहीं रहती।
"यह मेरा है"—का विचार नहीं घेरता।
सुख-दुःख में संतुलित रहता है।
पैसा, पत्थर समान समझता है।
क्रोध या वासना नहीं रहती।
भगवान का नाम उसके मुँह पर रहता है।
वह अन्तर्मुखी वृत्ति का रहता है।

वह शान्ति और आनन्द से पूर्ण रहता है।

## जप

भगवान के नाम या मन्त्र को बार-बार दुहराना जप है।
जप तीन प्रकार के हैं—(१) बैखरी (२) उपांशु तथा (३) मानसिक

उपांशु जप बैखरी से हजार गुणा शक्तिशाली होता है।

जप की शक्ति ध्यान से पुष्ट होती है।
मंत्र में अपार शक्ति रहती है।
मंत्र से मन का परिष्कार होता है।
मंत्र अनन्त तेज का समूह होता है।
पञ्चकोश सदा प्रभावित होते रहते हैं।
मन अन्तर्मुखी होता है।
मन्त्र शक्ति से साधन शक्ति दृढ़ होती है।
मन्त्र अपौरुषेय शक्ति जगाता है।
तब मन्त्र-चैतन्य जगता है।
यह मन शुद्ध करता है, मल-पाप हटाता है।
नाड़ी और प्राणमय कोश को शुद्ध करता है।

किसी मन्त्र के एक या दो वर्षों तक जप से चित्त-शुद्धि होती है।
अन्त में मन्त्र साधक को इष्ट देवता तक ले जाता है।

नाम जप से सबने प्रभु को पाया है।

## हठयोग

पद्मासन—कमलासन—बायीं जाँघ पर दायाँ, दायीं पर बायाँ पैर रखना है।

सिद्धासन—ऐड़ी गुदा के निकट, दूसरी लिंगमूल में और पहले सा।

**शीर्षासन**—कम्बल बिछाकर, घुटनों पर बैठकर अंगुलियों को एक दूसरी से मिलाकर। पैर उठाकर फिर धीरे-धीरे नीचे करें—श्वास धीरे-धीरे लेवें।

दोनों हथेली जमीन पर रखकर किसी मित्र को पैर उठाने को कह सकते हैं।

**सर्वांगासन**—सीधा लेटें पैर उठाएँ—मन गर्दन पर रखें।

**पश्चिमोत्तनासन**—जमीन पर बैठे—दोनों पैर दण्डायमान रखें। हाथों से दोनों पैर के अंगूठे पकड़े। ललाट दोनों घुटनों पर रखें। चर्बी घटती है इससे।

## सुख पूर्वक प्राणायाम

सिद्धासन या पद्मासन पर बैठ कर अपने इष्ट देव की मूर्ति का ध्यान करें। दायीं नासिका अँगूठे से बन्द करें। बाँयी नासिका से धीरे-धीरे वायु खींचें। फिर बाँयी भी बन्द करें। छोटी और अनामिका से बन्द करें। कुम्भक किये रहें। फिर सांस छोड़ें—फिर दायीं नासिका से श्वास लें। फिर सांस रोकें—बाँयीं नासिका से छोड़ें—२० बार सुबह २० बार शाम में करें। दैवी सम्पदा का भाव रखें। कठिन श्रम वाले साधक ४ बैठक में ४×८० = ३२० कुम्भक कर सकते हैं।

## भस्त्रिका प्राणायाम

लोहार की भाथी जैसे सिकुड़ती और फैलती है वैसे ही धीरे-धीरे वायु भीतर ले लें, दोनों नासिका से। फिर जल्दी छोड़ दें। १० से बीस बार जल्द सांस लें। फिर लम्बी सांस से वायु खींचकर कुम्भक करें। यह भस्त्रिका ३ बार करें। आप सदा स्वस्थ रहेंगे।

## शीतली प्राणायाम

मुँह से श्वास लें— सु-स्ता के। रोकें जब तक रोक सकें। फिर दोनों से श्वास छोड़ें। रोज करें। खून को साफ करता है— भूख-प्यास मिटाता है।

## महामुद्रा

बाँयी एँड़ी से गुदा द्वार बन्द करें—दायाँ पैर ताने, अँगूठे दोनों हाथों से पकड़ें। दाढ़ी को छाती से सटायें गला सिकुड़ा लें। भ्रूमध्य दृष्टि रखें। सब रोग दूर हों।

## उड्डीयान बन्ध

श्वास बाहर करें। पेट के मांस को पीछे की ओर सिकुड़ा लें। मेरुदण्ड में सट जायें। ५ या ६ बार रोज करें।

———

# मन और इसकी क्रियायें

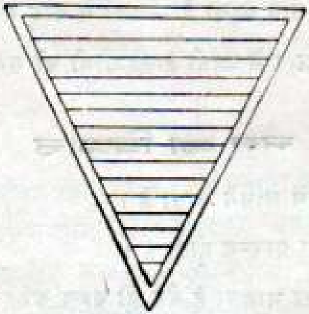

## साधना का सार

राजयोगी आठ पदों से योग की सीढ़ी पर चढ़ते हैं—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। यम और नियम से अपने को पवित्र बनाने का वे शिक्षण पाते हैं।

फिर वे आसन पर स्थिर होना सीखते हैं।

फिर प्राणायाम से मन को स्थिर और नाड़ी को शुद्ध करना सीखते हैं।

प्रत्याहार, धारणा और ध्यान से वह समाधि पाते हैं।
संयम से वे अनेक सिद्धि पाते हैं।
चित्त की वृत्तियों का निरोध कर पाते हैं।
हठ योग—भौतिक शरीर और श्वास से सम्बन्धित है।
राजयोग—मन से सिद्ध होता है।
ये दोनों योग अन्योन्याश्रित हैं।
जहाँ हठयोग की समाप्ति होती है वहीं से राजयोग शुरू होता है।

हठयोगी अपनी साधना शरीर और प्राण से शुरू करते हैं--राजयोगी मन से-ज्ञानयोगी बुद्धि और इच्छा शक्ति से शुरू करते हैं।

राजयोग में सफल होने के लिए साधक को मन एवं उसके नियन्त्रण का विज्ञान जानना है।

हठयोगी को आसन, प्राणायाम, मुद्रा और बन्धन से मूलाधार में सोयी कुण्ड लिनी को जगाना है।

प्राण अपान को एक कर सुषुम्ना में भेजना है।

श्वास रुकने से ताप बढ़ता है—चक्रों से वायु सहस्रार तक जाता है।

कुण्डलिनी सहस्रार में जाती है तो योगी को समाधि होती है।

## मन का विकास

मन तीन रूपों में सामने आता है।

सामान्य भान से प्रारम्भ होता है।

इन्द्रियों को जैसा भासता है वैसे ही ग्रहण करता है।

यह सच्चे या आदर्श की जिज्ञासा नहीं करता।

साधारण लोग सामान्य-भान से ऊपर नहीं उठते हैं।

अन्तःकरण के ये चार भाग हैं।

१. रजोगुण प्रधान अन्तःकरण—मन है।

२. सतो ,, ,, बुद्धि है।

३. तमो ,, ,, अहंकार है।

४. तीनों गुणों की साम्यावस्था चित्त है।

एक पोखरा से जल नाली द्वारा किसी खेत में जाता है और भूमि के अनुसार आकार (वर्ग □ या त्रिकोणाकार △) या कोई रूप धारण करता है उसी तरह तैजस अन्तःकरण (मन) आँखों के सहारे बाहर जाता है या किसी अन्य इन्द्रियों के सहारे बाहर जाता है जहाँ वह बाह्य पदार्थ रहता है—फिर उसी आकार को वह धारण कर लेता है।

मन की या अन्तःकरण के इस आकार-परिवर्तन को वृत्ति कहते है। मन प्रच्छन्न शक्ति के रूप में निकल कर बाह्य पदार्थों का आकार धारण करता है।

मुक्तिकोपनिषद में श्री रामजी हनूमान से कहते हैं—मन को दो प्रकार से विनष्ट करते हैं (१) आकार सहित (२) आकार रहित। आकार सहित नष्ट करना ही जीवन मुक्तावस्था है; आकार रहित नष्ट करना विदेहमुक्ति की अवस्था है। मलरहित मन चैतन्य से मिल जाता है।

## ज्ञानी का मन

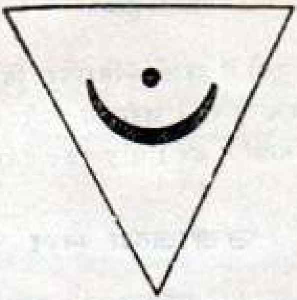

सुषुप्ति में मन सूक्ष्मतर अवस्था में चला जाता है वैसे ही ज्ञानी में मन सूक्ष्म ही रहता है। निर्विकल्प समाधि में मन पूर्णतया नष्ट नहीं होता बल्कि सुषुप्ति की तरह ही गौण हो जाता है। ज्ञानी के विभिन्न कार्यकलापों में—खाने, स्नान करने, मल-मूत्र त्याग करने—की पूरी व्याख्या नहीं हो सकती। ज्ञानी का शरीर प्रारब्ध-क्षय के लिए ही पड़ा रहता है। भोग-क्रिया मात्र वृत्तियों से ही होती है। दुःख-सुख का अनुभव वृत्तियों से ही होता है। ज्ञानी भी अपने प्रारब्ध में इनका अनुभव करते हैं। **वह प्रभावित भले ही न हों,** क्योंकि वे **सदा स्वरूपानन्द** में रहते हैं। शरीर प्रभावित होता ही है—घाव, फोड़े इत्यादि हो सकते हैं।

सविकल्प समाधि में वृत्तियाँ नष्ट होती हैं—
संस्कार रहते हैं—तथ्य रहते हैं मन में।
निर्विकल्प में मन तथ्यहीन रहते हैं।
**विचार मात्र से निर्विकल्प होता है।**
हठयोगी की समाधि **कुण्डलिनी जागरण** से होती है।

**कीट-भृङ्ग-न्याय** से निरन्तर विचार करते-करते ऐसा होता है। श्रवण-मनन का अभ्यास निरन्तर चलता रहता है। वह जो सोचता है वह हो जाता है। मन जिसपर ध्यान करता है वही बन जाता है। मन परमाणुमय भी है और सर्वव्यापी भी। एक बार में एक वस्तु ग्रहण करता है इससे वह परमाणुमय है। समाधि से शुद्ध होने पर फैल जाता है और सर्वव्यापी हो जाता है।

## मन: पहचान

भूखा बाज चिड़िया पर झपटता है। चिड़िया कमरे में घुस पड़ती है। बाज हटा, फिर चिड़िया बाहर आई। फिर बाज झपटा—इस तरह भय से वह चिड़िया

बेचैन हो जाती है। **प्रारम्भिक ध्यान में** मन की यही गति होती है। मन चिड़िया की तरह डाली-डाली पर भागता फिरता है—

आप मन को इन्द्रिय सुखों से हटालें—**निरन्तर निदिध्यासन** से आत्मा में दृढ़ कर दें। विचार, धारणा करते रहें। शरीर से अपने को हटाने का उद्यम करें। प्रगति में देर हो रही है, चिन्ता न करें। शांत रहें। प्रतीक्षा करें। ध्यान लगेगा।

## उतावला मन

एक विद्यार्थी नाव से गंगा पार कर रहा था—ऋषिकेश में। स्वर्गाश्रम से मुनि की रेती पर। नाव में एक छोटा बन्दर था। ताड़ी वाला भी एक घड़ा ताड़ी लेकर नाव में जा रहा था। बन्दर ने भर छाक ताड़ी पी ली। विद्यार्थी बन्दर से उलझ रहा था। एक बिच्छा ने बन्दर के पैर में डंक मार दिया। विद्यार्थी ने अपनी छड़ी बन्दर के मुँह में सटा दी। अब सुनिये, क्या हुआ। बन्दर तो स्वभाव से ही नटखट ठहरा। जीभर ताड़ी भी इसने पी ही ली। मस्ती आ ही गई। बिच्छा का डंक लगा ही था। विद्यार्थी का डंडा भी कुछ कम नहीं। उसकी मनोदशा को सोचिये। रुद्र बन गया वह। नाव के एक छोर से दूसरे छोर पर छड़प गया। खुराफात की सीमा न रही। सभी यात्री नाव के एक ही ओर आ गये। नाव डूब गई।

**आवेगशील** मन की यही दशा होती है। मन में वासना है, तरंग है, कामनायें हैं, भाव हैं। आपके भोजन कामोद्दीपक हैं। नाटक सिनेमा है। बहुत से उत्तेजक उपन्यास भी रहते हैं। आप भी दिन-रात अनात्म विषयक बातों पर लगे रहते हैं। अतः आपकी स्थिति उस बन्दर से अच्छी नहीं, जिसने नाव डूबो दी। एक क्षण के लिए भी आपको मानसिक शांति नहीं। चिन्तायें आपको घेरे हैं। कष्ट आपकी जान ले रहे हैं। काम, क्रोध, राग और द्वेष से आप इधर-उधर भटक रहे हैं। अनन्त संसारचक्र में आप भटक रहे हैं। आप मानसिक वैराग्य रखें, मानसिक संन्यास लें। योग, ध्यान लें। निदिध्यासन लें। साधन चतुष्टय ग्रहण करें। ध्यान ही **आपको बचायेगा।**

## शिशु का दृष्टान्त

निगरानी रखें, प्रार्थना करें—ईसा ने कहा था। मन पर निगरानी रखें। वृत्तियों या विचारों को देखें। भगायें उन्हें। निकाल डालें। मार डालें। योगी की इच्छा

शक्ति लावें। आत्म-निवेदन, आत्म समर्पण कर दें, प्रभु को। आपके इष्टदेव आपकी सहायता करेंगे। मन पर गौर कर देखें।

ठीक बच्चा की तरह व्यवहार करता है। बच्चा कोयला खाने को दौड़ता है। हटावें उसे। मिठाई देवें। मिठाई खत्म हुई और वह राख की ओर दौड़ता है। इसी तरह मन अपनी पुरानी वस्तुओं की ओर दौड़ता है। उनसे यह मजा ले चुका है। वह उसी ओर झपटता है। यह पुरानी आदत है। यह नहीं छोड़ेगा। पुरानी गलियों के राहों में घूमता है। **जहाँ पाँच सात मिनट ध्यान लगा—नयी राह में चला कि—**फिर भाग पड़ता है पुरानी राहों में—अनात्म विषयों में--अनित्य तत्त्वों में। बच्चा चलता है—गिर पड़ता है। फिर उठता है—फिर गिरता है। ऐसे ही मन अपने **लक्ष्य—या गन्तव्य स्थान** की ओर थोड़ी दूर चलता है--गिर पड़ता। दलदल भरे तालाब में गिर पड़ता है। आप उस दलदल से मन को उठा लेवें। उसे साहस दें, शाबासी दें, पुचकारें, प्रसन्न करें।

जिस तरह गुल्ली डंडा खेल में गुल्ली को उठा लेते हैं - फिर डंडा के सहारे उसे दूर स्थान फेंकते हैं---वैसे ही **मधुर भावों से अध्यात्मिक विचारों से मन को पुष्ट करें और ब्रह्माकार वृत्ति से उसे फैलावें-आत्मा में लगावें**--निरन्तर अभ्यास चाहिये।

## मतवाला साँड़

किसी किसान का मतवाला साँड़ खूटे की रस्सी तोड़कर खेतों में भाग गया है। लौटता ही नहीं। मालिक उसे अपने ही हाता में खिलाना चाहता है, रखना चाहता है। उसने उसके लिए जौ, चना, गेहूं, घास सब कुछ जमा कर लिया है। उसे दिखाता भी है—पर वह अड़ियल है—अड़ा है, डटा है—खेतों में। घर नहीं लौटता। कुछ समय बीतने पर खेतों से तृप्त होने पर वह लौटा। अब घर का खाना उसे पसन्द पड़ने लगा। खेतों में भागना बन्द हुआ।

**चञ्चलशील मन को आसानी से वशीभूत करेंगे।** स्थिर साधकों के लिए यह आसान काम है। मन मतवाला साँड़ की तरह है। इसे पहले **सगुणमूर्त्ति में** लगावें। कृष्ण हैं, राम हैं, चतुर्भुज विष्णु हैं मन ज्योंही भागने लगे— इसे मूर्त्ति में लगा दें। **धारणा पूर्ण हो जाय तो निर्गुण में ध्यान करेंगे**—"मैं अनन्त सर्वव्यापी ज्योति हूं।"

यह अपने भीतर से ही आनन्द पायगा और ब्रह्म में मिल जायगा।

## मत्त घोड़े का दृष्टान्त

आपके अस्तबल का एक नया घोड़ा है जो पोस नहीं मानता है। चरने के लिए यह बाहर लाया गया। यह अस्तबल में फिर वापस जाना नहीं चाहता। यह भीषण रूप में उछलता है। आप अपने अहाते में उसे लाना चाहते हैं—दो रास्ते हैं। एक है कि आप उसे चाबुक से मारें, वश में करें। दूसरा है उसे पुचकारें, घास दें, दाना दें, उसके मुंह के निकट चना ले जाँय। इसे खाने न दें। दिखा दें सिर्फ। यह आपके पीछे चलेगा। अस्तबल में ले आवें। फाटक पर ताला भर दें। अनुशासन हीन मन भी उस मत्त घोड़ा की तरह है। प्राणायाम और अन्य हठयौगिक साधनायें क्रूरता के मार्ग है। सुगम मार्ग है मन की समता साधित करने का। आपको सुख मिलेगा, आनन्द भी मिलेगा। धीरे-धीरे मन को शिक्षित करें। समता मिलेगी। मन की दो धारायें हैं—आकर्षण और विकर्षण-राग और द्वेष। नष्ट होंगे। समता साधना से इच्छा शक्ति का विकास होता है। राग द्वेष से ही सभी प्रकार के आवेश प्रकट होते हैं। ये ही आपको क्रियाशील बनाते हैं। ये आत्मसमर्पण के शत्रु हैं। कामनाओं और आवेगों को नष्ट करें। अभिनिवेश को मारें—जीवन की प्यास है ये—बाह्य पदार्थ और इन्द्रियजन्य सुख हैं इनमें। विवेक, वैराग्य, तितिक्षा, उदासीनता विचार का विकास करें। **निरन्तर सत्संग करें।** दो धारायें मर जायेंगी, सूख जायगी। ये ही तरंगे हैं जो शत्रु-मित्र, गर्म-शीत, शुभ-अशुभ—इत्यादि द्वन्द्व भावों को पनपाती हैं। ये द्वन्द्व भ्रमात्मक हैं। आप दुःख को सुख में, सुख को दुःख में बदल सकते हैं। दुःख और सुख बाह्य पदार्थों में नहीं रहते हैं, मन में रहते हैं। माया छलती है। इन्द्रियाँ बुरी ठगती हैं। सदा सावधान रहें। पाप-पुण्य मन में ही हैं, शत्रु-मित्र मन में ही हैं। आपका शत्रु और दूसरे का मित्र है जो पहले आपका मित्र था वह अभी शत्रु है। द्वेष का वस्तुतः कोई रूप नहीं है, वह भ्रमात्मक है, नष्ट करें उन्हें। **शान्ति में विश्राम करें।**

## स्थिति-प्रज्ञ

इन्द्रियों पर वश करनेवाला स्थिति-प्रज्ञ है। बिना प्रत्याहार के आप देह भाव से ऊपर नहीं जा सकते हैं। प्रत्याहार आत्म संयम से होता है—इन्द्रिय दमन से होता है। नहीं सँभलते हैं तो रहा-सहा विवेक भी समाप्त हो जायगा।

इन्द्रियों की—राजसी कान्ति से आध्यात्मिक संस्कार उड़ जायेंगे। शान्ति के इन शत्रुओं पर अधिक ध्यान देना है। यह ज्ञानयोगियों के लिए भी है। **इन्द्रिय संयम दम है।** षट्सम्पत्ति में एक है। जिह्वा घोर शत्रु है। जिह्वा नियन्त्रण से ही

इन्द्रियों पर नियन्त्रण है। ३ साल तक नमक छोड़ दें। जिह्वा पर आसानी से अधिकार हो जायगा। दो वर्षों तक मौन रहें। आप वागेन्द्रियों पर अधिकार कर सकते हैं। नित्य तीन घन्टे आसन पर बैठें। त्राटक से आँखें स्थिर हो जायगी। योनि मुद्रा से कान वश में होंगे।

## भ्रमणशील मन का नियन्त्रण

मन की आदतों को जानें। मन की राहों को जानें। आप उसे वश में कर सकेंगे। इच्छा शक्ति को विकसित करेंगे—स्मृति बढ़ा पायेंगे। मन की एक आदत है घूमने की। एक बिन्दु पर यह स्थिर नहीं रह सकता है। हवा की तरह है। चञ्चल है। अर्जुन ने गीता में कहा—हे कृष्ण, मन बड़ा ही चञ्चल है, इसे मोड़ना, झुकाना, दबाना—बड़ा कठिन है"—। भगवान ने कहा—यह सही है कि मन को दबाना कठिन है—पर निष्काम भाव से दबाया जा सकता है। मन को वशीभूत करना है तो कामनाओं को नष्ट करेंगे। इन्द्रियों पर नियन्त्रण करेंगे। कामनायें ही मन को अशान्त बनाती हैं। इन्द्रियाँ बाह्य पदार्थों पर दौड़ती हैं। मन की किरणें बाहरी पदार्थों पर बिखर जाती हैं। इन्द्रिय जनित सुख के बाह्य साधनों पर मन की तरंगे उछलने लगती है। मन सुन्दर चीज देखना चाहता है, सुरीला गाना सुनना चाहता है। तन्मात्राओं को साथ लेकर इन्द्रियों के बहकावे में पड़कर पञ्चज्ञानेन्द्रियों को घसीटता हुआ मन पुरानी राहों में भटकता रहता है।

अतः कामनाओं को शान्त करें। इन्द्रियों को दबायें। धारणा ध्यान को घनीभूत करें। विचार करें—मन को आत्मा में लगायें बारम्बार लगाने से यह स्थिर हो जायगा। साधारणतया देखते हैं कि खुले बन्दर की तरह मन दौड़ता, भटकता है। संगति का प्रभाव पड़ता है। वह कभी किताब पर दौड़ता है, तो कभी मित्र पर, कभी रेल पर, तो कभी पहाड़ पर। जाने दें। जनकपुर जाता है राजा विदेह का स्मरण कर आप मग्न हो सकते हैं, कलकत्ता जाता है तो कालीघाट और दक्षिणेश्वर, रामकृष्ण परमहंस का स्मरण कर आप आनन्द ले सकते हैं। अल्मोड़ा जाता है तो मायावती में श्री स्वामी विवेकानन्द द्वारा स्थापित अद्वैताश्रम का स्मरण कर सकते हैं—अद्वैत ब्रह्म का भाव अपने में भर सकते हैं।

यह सब क्षणभर में हो सकता है। आप कल्पना भी नहीं कर पाते कि कितनी जल्दी मन अति वेग से एक पदार्थ से दूसरे पदार्थ पर एक स्थान से दूसरे स्थान पर दौड़ जाता है।

## धारणा

एक वस्तु पर विचार स्थिर हो जाय या बार-बार जाय वह धारणा है। बाहर जाने से साधक मन को रोकते हैं और एकही स्थान पर उसे लगाते रहते हैं। एक विचार है, एकनिष्ठ है, तो यह आध्यात्मिक साधना है। यह योगाभ्यास है। यह धारणा-ध्यान है। यही ले जायगा समाधि की ओर।

एक ही बिन्दु पर, एक ही तथ्य पर मन को बार-बार लगाना है। छोटे से वृत्त में उसे रख देना है। समय आयगा जब मन वहाँ अटकेगा। यह आपके निरन्तर अभ्यास का फल है—अखंड साधना का फल है। आनन्द की अब सीमा नहीं। सेब का ध्यान आया तो बस, सेब ही सेब। कोई फालतू विचार नहीं। घंटी की टनटन आवाज जैसे एक सुर में चलती रहती है वैसे ही बस एक धारा है—एक भाव है—एकाग्र है—आगे में एक है—उसी से सम्बद्ध अनेक विचार होंगे। कोई परवाह नहीं। आप काम करते-करते एक विचार पर आ जाते हैं। वह एक विचार **भी जब मिट जाता है आप समाधि में हैं।** जबतक एक विचार है तो आप निचले स्तर पर हैं सविकल्प-समाधि के। जब कोई विचार नहीं है तो मन खाली है। यह **राजयोग की विचार-शून्यावस्था है।** आप इस शून्यावस्था वृत्ति से ऊपर उठेंगे और अपने को **परमपुरुष या ब्रह्म से एकीभूत देखेंगे। मन के शान्त साक्षी के रूप में—इसी साक्षी से** मन को शक्ति और ज्योति मिलती है। **तब आप उच्चतम लक्ष्य पर आ जाते हैं।** मन तो जड़ है—वह तो **अधिष्ठान से—उद्गम से—आत्मा से** ज्योति पाता है। पानी पर तो धूप सूर्य से जैसे किरणें पाती हैं। चैतन्य से मन को ज्योति मिलती है और वह मन प्रकाशित रहता है। मन को स्वतंत्र ज्योति नहीं है। यह सत्य है। ऋषियों का प्रौढ़ मत है। आत्मा सूर्यों का सूर्य है। ज्योतियों की ज्योति है। मन तो वर्षा-ऋतु की बीर बधूटी (कीट) जैसे है।

आप अपनी प्रिय कोई वस्तु लेकर ध्यान करें। निरन्तर करें। **तबतक सारा संसार मरा हुआ ही जान पड़े। अभ्यास** से बढ़ पायेंगे आप। मन स्थिर हो जाता है। सभी कामनायें भाग जाती है। कामनाओं से संकल्प होते हैं। मनुष्य तो इच्छित वस्तु पीने के लिए ही क्रिया करता है। अतः वह संसार में पकड़ा जाता **है। वासना नष्ट होने पर संसार-चक्र रुक जाता है।**

अहंकार, संकल्प, वासना, प्राण—का मन से घनिष्ठ सम्बन्ध है। इनके बिना मन ही नहीं। अहंकार मन का मूल है। मन-वृक्ष की शाखायें हैं संकल्प। वासना मन का बीज है। अज्ञानमय भव-वृक्ष का मूल है मन। इसकी शाखायें चारो दिशाओं में फैलती है, पत्ते फूल-फल से भर जाता है यह वृक्ष। मन को—इस भव-वृक्ष की जड़ को

नष्ट करने से जन्म-मरणमय यह वृक्ष नष्ट होगा। ब्रह्म-ज्ञान के कुल्हाड़ के कुठार से काट दें।

## विचार-मंथन

सात्विक विचार मन को देने हैं। धर्मग्रन्थ दें। जप दें। ध्यान दें। मधुर सूक्ति दें। अपने विचारों पर निगरानी रखें। एक विषय पर सोचते हैं—वही रहे।

मन संगति खोजता है।

मन अपेक्षा चाहता है।

मन लगातार चलना चाहता है।

ये मन की विधियाँ हैं—नियम हैं—कानून हैं। आप उन्हें पहचान लें—फिर मन्थन करें। मन तो संस्कारों का एक गट्ठर है।

बाहरी चीजों के संसर्ग से कामनायें जगती हैं, भावनायें जगती हैं। मन इन्हीं की गठरी है। ये कामनायें बदलती हैं, भावनायें बदलती रहती हैं। मन के भण्डार घर से पुरानी कामनायें निकलती हैं और नई कामनायें आ जमती हैं।

जब आप इन्हें निकाल देते हैं तो मन नाम की कोई वस्तु नहीं रह जाती।

## ध्यान का स्थान

ध्यान के लिए संसार आपको नहीं रुचेगा। यहाँ अनेक बाधायें हैं। वातावरण उल्लासपूर्ण नहीं है। आपके मित्र आपके घोर शत्रु हैं। अनर्गल बातों में आपका बहुमूल्य समय ले लेते हैं वे। यह अवश्यम्भावी है। आप तंग हैं। आप चिन्तित हैं। आप कोई सुन्दर स्थान चुन लें। एकान्त हो, शान्त हो, मौसम अनुकूल हो। सभी स्थानों में कुछ लाभ है, कुछ हानि है। इन्हीं में से कोई चुन लें। घूमने फिरने से अच्छा है जम जाना। एकान्त कमरा को ही गुफा बनालें। मन पर भरोसा न करें। यहाँ रहना चाहेंगे तो मन कहेगा वहाँ चलो। वहाँ गये तो कहेगा यहाँ चलो। इन्द्रिय और मन ऐसे ही ठगते रहेंगे। आपको ध्यान करना है न? तो जम जायें।

प्रलोभनों से सावधान रहें। तृष्णाओं पर निगरानी रखें। गंगा-किनारे, यमुना, नर्मदा तट, काशी, ऋषिकेश, अलमोड़ा, नैनीताल, रानीखेत—कहीं जम जायें।

## ब्राह्म मुहूर्त

साधक हैं आप। ब्राह्म-मुहूर्त में जग जायें सदा। साढ़े तीन से छः तक का समय रहता है। यह ध्यान का सुन्दर समय रहता है। आपका मन ताजा है। आप पूरी नींद ले चुके हैं। वायुमण्डल शांत है। सत्व भाग का प्रसार है। पूरा वातावरण सात्विक है। जाड़े में सवेरे नहाना कोई जरूरी नहीं। शौच इत्यादि से निवृत्त हो लें। हाथ मुँह धो लें। दाँतों को साफ कर लें।

### पद्मासन या सिद्धासन में बैठ जायें।

स्पन्दनों का सहारा लें। ब्रह्म-शिखर पर चलें। सवेरे उठने की आदत न हो तो घंटी वाली घड़ी रखें। जग जायें। जम जायें। चित्त आपका दास बन जायगा। पुरानी कब्जियत हो तो त्रिफला ले सकते हैं। हठयोग में उषापान करते हैं। थोड़ा जल पी लेते हैं।

आपका ध्यान-कक्ष है।

आप आसन पर बैठे हैं।

## ध्यान कक्ष

आपके ध्यान का कक्ष पृथक है। यहाँ सिर्फ आपही हैं।

अपने इष्ट देवता को इसमें आसन पर बिठायें।

धर्मग्रन्थ हैं—गीता, रामायण, उपनिषद, भागवत्—रख दें।

इस कमरा में स्त्री, बच्चा या मित्र को न आने दें।

आप भी स्नान कर इसमें आवें।

सुबह ४ से ५ और रात में ८ से ९ तक ध्यान करें।

थके मालूम हों तो पढ़ें। विचारों को थामें।

मन को शान्त करें।

भगवान के **शान्तं, शिवं, शुभं, सुन्दरं, कान्तं**—आदि गुणों का स्मरण करें।

**ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः** को जपें।

आपका उत्साह बढ़ेगा, उल्लास आयगा।

अभ्यास करें, प्रयास करें। भावना करें। अनुभूति लें।

कितना भी काम क्यों न रहे, आप आध घंटा ध्यान करें।

जहाँ चाह है वहीं राह है।

सदा याद रखें यमराज द्वार पर खड़े हैं।

अत: ध्यान करें। पावें आनन्द।

## ध्यान समय

त्रिकाल संध्या + मध्य निशा रूपी तुरीय संध्या।

ये तो चार शास्त्रीय समय हैं ही।

आपको इसमें सुविधा न हो तो प्रात: ४ से ५

और रात्रि में ६ से ८ बजे तक ध्यान करें।

अरविन्द आश्रम पाण्डीचेरी में तीन बार बैठते हैं।

एक बार में आप दो घंटे भी बैठ सकते हैं।

बाद में सावधानी से बढ़ा भी सकते हैं।

योग की सीढ़ी पर धीरे-धीरे चढ़ते चलें।

प्रात: ध्यान के समय मन ताजा रहता है।

योगवाशिष्ठ में श्री वशिष्ठ कहते हैं :—

प्रारम्भ में :—

**१/४ मन ध्यान में**

**१/४ मन मनोरंजन में—नहाने, धोने में**

**१/४ मन स्वाध्याय में**

**१/४ मन गुरु सेवा में—लगायें**

फिर ध्यान का समय बढ़ाते जायें।

६ घन्टे स्वाध्याय, ६ घन्टे ध्यान—

यह अरविन्द की प्रणाली है—अद्वैतानन्द की है।

## ध्यान प्रारम्भ

एकान्त में विश्राम करें। सुखासन में रहें। विघ्नों से डरें नहीं। आदर्श स्थिति जिनसे मिलती है। आप एकान्त सुख लें। आप एकाकी हैं—आप अपने

प्रभु के साथ बैठे हैं। ॐ के सहारे आप संसार के पार आ जायें। इन्द्रिय, प्राण, कामनायें—सभी प्रभु को सौंप दें। पञ्च-तत्त्व—अपनी सारी वस्तुएँ उन्हें दे दें। शरीर निरोग है, हल्का है, मन कामना-शून्य है, रंग में चमक है, वाणी मधुर है—मन अन्तर्मुखी है—**बस, ध्यान की पहली अवस्था है।** मन से लड़ें नहीं। जोर न दें ध्यान में। मांसों को ढीला छोड़ दें, नस नाड़ियों को हल्का रहने दें। मस्तिष्क को ढीला रखे। धीरे-धीरे इष्टदेव का स्मरण करें। अर्थ सहित अपने **गुरुमंत्र का जप करें।**

मन के बुलबुले को शान्त करें।

विचारों को एक दम शान्त करें।

मन भागता है, भागने दें। रोकें नहीं, उसे थकने दें।

शुरु में यह बिना जंजीर के बन्दर की तरह उछलेगा, फिर थककर स्थिर होगा।

अतः समय लगेगा ही।

विचार का एक आधार रखें।

इष्टमूर्त्ति का ध्याल कर सकते हैं।

मन्त्र का भी स्मरण कर सकते हैं।

ॐ की व्यापकता पर भी ठहर सकते हैं।

अभ्यास बल से मन इस आधार की शरण लेगा।

आप सांसारिक कर्मों से मन को छुट्टी दे दें।

**मन ध्यान में रमेगा।**

बारम्बार मन संसार से हटेगा, लक्ष्य पर डटेगा।

कुछ महीने लग जायेंगे इस संघर्ष में।

बुरे विचार आ रहे हैं मन में। इसे हठ से भगाना नहीं है। वे स्वयं भाग जायेंगे। आप इष्टदेव का स्मरण निरंतर करते रहें, उनकी लीलाओं का ध्याल करते रहें।

प्रतिपक्षभावना से सुन्दर विचार स्वयं आ जायेंगे।

आप मन्त्र एवं मूर्त्ति पर ध्यान तो लगायें।

मौन रहें। गहरा ध्यान लगेगा।

उनकी उपस्थिति का अनुभव करें। उनका नाम लें।

ॐ ॐ ॐ कहें। आनन्द से रटें, प्रेम से रटें।

अपने हृदय को प्रेम से भर लें।

संकल्पों का नाश करें, विचारों का नाश करें, अपनी झक्कीपना को हटायें।

चक्कर काटता है मन। प्रभु-मूर्त्ति में चक्कर कटायें उसे।

आँखें बन्द हैं हीं।

आसन पर डटे रहें।

दहराकाश—हृदय गुफा में मस्त होवें।

चमक से भरे आत्मा में डुबकी लगायें।

अमरत्व—सुधा पीवें।

शान्ति का आनन्द लें।

अब मैं आपको अकेला छोड़ देता हूँ।

अमृत-पुत्र उल्लास पावें।

परमशान्ति में हिलोरें लेते रहें।

## ध्यान शिक्षण

अखण्ड तैल धारावत् भगवान पर एकीभाव में ही सदा ठहरना—ध्यान है।

यही योगियों का ध्यान है, ज्ञानियों का निदिध्यासन है, भक्तों का भजन है।

जलती भट्ठी में लोहा रख दें—लाल हो जाता है। हटा दें तो लाली चली जाती है।

आप इसे लाल ही लाल देखना चाहते हैं तो आग में रखे रहें।

**मन को ब्रह्मज्ञान से सदा ओतप्रोत देखना चाहते हैं तो ज्ञान की ब्रह्माग्नि और अखण्ड ध्यान से उसे सदा पूर्ण रखें।**

आध घंटे आप ध्यान करेंगे तो एक सप्ताह आप उसकी शक्ति से शान्ति और अध्यात्म का आनन्द ले सकेंगे।

**आसन से** शरीर स्थिर होता है।

**बन्ध, मुद्रा से** शरीर दृढ़ होता है।

**प्राणायाम से** शरीर हल्का होता है।

**नाड़ी शुद्धि से** मन की साम्यावस्था प्रभावित होती है।

तीर्थस्थान, मंदिर, सरिता तट, सागर-संगम, वन, संतों का वास, सत-शास्त्रों का सान्निध्य—इन सबों से ध्यान को बल मिलता है। आप इनका सहारा ले सकते हैं।

आप नये साधक हैं तो श्लोक, स्तोत्र-पाठ कर सकते हैं। मन सांसारिक पदार्थों से सिमट जायगा। **निष्ठा दृढ़ होगी।**

ध्यान से पहले मन में प्रभु की मूर्त्ति बसा लें। आप भगवान कृष्ण का चित्र देख रहे हैं, आँखें खोलकर ठीक से देखें, देखते रहें—जबतक उनको पूरी तरह आप हृदय में, स्मृति-पटल में बिठा न लें—देखते रहें। फिर आँखें बन्द कर ध्यान दें। उनकी ज्योति पर ध्यान करें। पहले सगुण ध्यान—फिर निर्गुण। निर्गुण-ध्यान में आकर विलीन हो जाता है। ध्यान मन से ही शुरू होता है।

मन से मुक्त साधक ही **परम निष्ठा** पाते हैं। मन के सभी मल बाहर चले जायें। तभी संसार-भ्रम भागेगा। जब आप आग सुलगाते हैं तो पहले थोड़ा खड़ में लगाते हैं, कागज या लकड़ी के पतले टुकड़े में। आग शीघ्र बुझने लगती है, फिर हवा से फूकते हैं—कुछ देर में आग सुलग जाती है। अच्छी तरह सुलग जाने पर बुतना शीघ्र संभव नहीं। वैसे ही ध्यान करते समय साधक के विचार पुराने गड्ढों में ही गिरने लगते हैं। उन्हें अपने मनको उठा लेना है, बारम्बार लक्ष्य पर बैठाना है। जब ध्यान गहरा लगता है तो वह प्रभुमय हो जाता है। तब ध्यान **सहज** हो जाता है। स्वभाव बन जाता है। **तीव्र वैराग्य** से हवा करें। ध्यान की **आग** को सुलगायें।

प्रारम्भ में मन को अनेक प्रकार से शिक्षित करें। किसी ठोस वस्तु या मूर्त्ति पर ध्यान करें। नीले आकाश पर ध्यान करें। सूर्य की अनन्त रश्मियों पर ध्यान करें। **सोऽहं पुरश्चरण** पर ध्यान करें। शरीरस्थ विभिन्न चक्रों पर ध्यान करें। **सत्यं, ज्ञानं, अनन्तं, एकं, नित्यं** पर ध्यान करें।

अन्त में एक पर अटक जायें।

ध्यान के समय आँखों पर जोर मत दें।

मस्तिष्क को दबाव में न डालें।

मन से संघर्ष भी न करें।

स्थिरता से लक्ष्य पर सोचें।

व्यापक आकाश पर ध्यान करना भी एक प्रकार से निर्गुण, निराकार पर ध्यान देना है। अनन्त पर ध्यान से अन्तयुक्त पदार्थों पर मन रमण करना छोड़ देता है। शान्त-सागर में यह पिघलने लगता है। यह सूक्ष्म से भी सूक्ष्म होने लगता है। कुछ लोग आँखें खोलकर ध्यान करते हैं—कुछ आँखें बन्द कर।

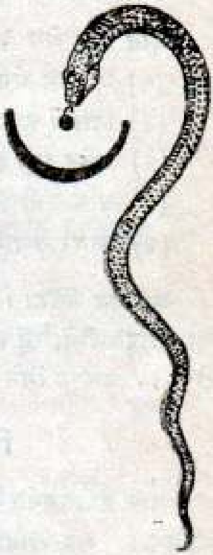

विश्वप्रेम जाग्रत करें।

विश्वात्मा से एक करें अपने को।

स्वार्थ और संकीर्णता भगायें।

फैलें। जगें। उठें।

आलस त्यागें—एकता और एकरूपता देखें।

छिपी हुई शक्तियों का उद्‌घाटन करें।

आत्म-साक्षात्कार करें।

**सुन्दर भविष्य आपकी प्रतीक्षा कर रहा है।**

ध्यान से आत्मा को पावें।

आत्म-ज्ञान से शान्ति मिलेगी।

आनन्द मिलेगा—अमरत्व मिलेगा।

आप राजराजेश्वर बनेंगे।

## गुलाब पर ध्यान

किसी ठोस वस्तु या विचार पर मन को स्थिर करना ही धारणा है। धारणा के बाद ध्यान आता है। जिस वस्तु की धारणा करते हैं उसी की अव्याहत धारा है ध्यान। **पद्मासन, सिद्धासन या सुखासन में बैठें।** आप अपने ध्यानकक्ष में हैं। आप गुलाब पर ध्यान करें। गुलाब के रंग पर, काँटों पर—ध्यान करें। उसकी किस्मों पर ध्यान करें—उजला गुलाब, पीला गुलाब, लाल गुलाब, कोबी गुलाब, अनेक प्रकार हैं—उन सबों को सोचें।

फिर गुलाब से तैयार होनेवाली चीजें हैं—

गुलाब जल, गुलाब शर्बत, ईत्र गुलाब, गुलकन्द इत्यादि पर अपना ध्यान दें। उनकी उपयोगिता पर सोचें। गुलाब जल से आखें धोते हैं—कब्जियत में गुलकन्द

खाते हैं—फूल **भगवान** पर चढ़ाते हैं, माला बनाकर पहनते हैं। अपनी नसनाड़ी पर टेढ़ा प्रभाव पड़ता है जब हम उस गुलाब को स्मरण करते-करते मग्न हो जाते हैं। गुलाब को छोड़कर अन्य कुछ नहीं सोचें। मन एकाग्र हो जाता है। सुबह पाँच बजे से आध घंटा रोज ध्यान कर देखें। एकमास **में** एकाग्रता आयेगी ही।

## विराट पुरुष पर ध्यान

अपने ध्यानकक्ष में **पद्मासन** या **सिद्धासन** में बैठें।

आध घंटा रोज ६ मास तक ध्यान करें।

(१) आकाश भगवान का मस्तक है (२) धरती चरण हैं।
(३) दिशायें हाथ हैं (४) सूर्य-चन्द्र उनकी आंखें हैं।
(५) अग्नि मुख है (६) धर्म उनकी पीठ है।
(७) घास जड़ी-केश है (८) पर्वत उनकी हड्डियाँ हैं।
(९) सागर जलाशय है (१०) नदियाँ नस-नाड़ियाँ हैं।

**अब मन फैलेगा।** फिर सगुण-ध्यान करें। राम हैं, कृष्ण हैं—शिव हैं। जहाँ मन ज्यादा खींचें, रहें। ध्यान करें। अन्त में **निर्गुण-ज्योति** ध्यान करें। ध्यान गाढ़ा होगा। आनन्द मिलेगा।

## दिव्य संगीतों पर ध्यान

आप संगीतमर्मज्ञ हैं। एकान्त स्थान में बैठिये। अपने हृदय को संगीत से संतुष्ट कीजिये। राग-रागिनियों का विकास कीजिए। अपने को भूल जायें। भूतकाल को भूल जायें। परिस्थितियों को भूल जायें। यह आसान तरीका है। अच्छे-अच्छे स्तोत्रों को चुन लें। जयदेव, विद्यापति, गोविन्ददास, मधुपजी, सुमनजी इत्यादि रचित प्रार्थनाओं को चुन लें। सूर, तुलसी, रामप्रसाद के, मीरा के—अनेक सुन्दर भजन हैं। चुन लें। गावें, ध्यान करें। रावण ने भगवान शिव को सामगान से प्रसन्न किया था। आप बाह्य पदार्थों से मन को लौटा सकते हैं, इसी संगीत के माध्यम से। संगीत आपको ऊपर उठाता है, आपके मन को फैलाता है। आपका व्यापक मन सगुण और निर्गुण ध्यान में शीघ्र लग सकता है। हृदय शुद्ध हो, अभ्यास दृढ़ हो, संगीत में रूचि हो, गाने की कला हो—बस ध्यान ही ध्यान है।

## गीता के श्लोकों पर ध्यान

आसन लगा लें। चुने हुए श्लोकों को रट लें। उनके अर्थों पर विचार करें। योग के प्रभाव पर ध्यान करें। मन की समता पर ध्यान करें। १३ वें अध्याय में

...थित ज्ञानी के लक्षणों पर ध्यान करें। विश्वरूप दर्शन पर ध्यान करें। गुणातीत ...व पर ध्यान करें। निम्न श्लोकों पर ध्यान कर सकते हैं।

| | | | |
|---|---|---|---|
| अध्याय | ६ | श्लोक | ६ |
| " | ११ | " | ५४ |
| " | १५ | " | ११ |
| " | १८ | " | ५४-५५-५६ |

ध्यान लगेगा, समाधि मिलेगी—प्रभु मिलेंगे और तत्त्व दर्शन होगा।

## गायित्री पर ध्यान

गायित्री वेदमाता है। यह प्रभु का प्रतीक है। गायत्री-जप से चित्तशुद्धि होती है। यह सर्वमान्य प्रार्थना है। ब्रह्म गायत्री है यह।

**ॐ भू र्भु वः स्वः तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।**

ॐ = परब्रह्म
भूः = भौतिक स्तर
भुवः = अन्तरिक्ष
स्वः = स्वर्गलोक
तत् = परब्रह्म
सवितुः = ईश्वर
वरेण्यं = पूज्य
भर्गो = पापनाशक
देवस्य = महिमा
धीमहि = हम ध्यान करते हैं।
धियो = बुद्धि
यो = जो
नः = हमारा
प्रचोदयात् = प्रकाशक है।

संसार की सृष्टि करने वाले भगवान और उसकी महिमा का हम ध्यान करें।

जो सदा पूज्य है, जो हमारे पाप-समूह और अज्ञान को मिटाता है, **वह हमारी बुद्धि को प्रकाश देवे।**

सूर्योदय से पूर्व अपने ध्यानकक्ष में स्नान कर पहुँच जायँ। कम से कम १०८ बार जप करें।

निरन्तर अनुभव करें कि आप उसके आलोक से पूर्ण हो रहे हैं। आपको ज्योति मिल रही है, शुद्धि मिल रही है। त्रिकुटी पर दृष्टि रखें। भ्रूमध्य स्थान है।

गायत्री के २४ लाख जप का पुरश्चरण होता है।

३,००० जप रोज कर सकते हैं।

मन के मैल साफ कर लें।

अध्यात्म बीज के लिए निर्मल क्षेत्र बना लें।

मालवीय जी ने गायत्री पुरश्चरण से सब किया था।

पञ्चदशी के विख्यात लेखक स्वामी विद्यारण्य ने गायत्री पुरश्चरण कर उसका दर्शन पाया था। दक्षिण भारत के अकाल को उन्होंने सुवर्ण वृष्टि से भगाया था।

**जप प्राणमय कोश को साफ करता है।**

**मन को शुद्ध करता है।**

**एकाग्रता देता है।**

**इष्ट–सिद्धि देता है।**

**आपको शक्तिशाली बनाता है।**

## महावाक्यों पर ध्यान

श्रुतियों की लीला अनन्त है। उनके दिव्य वाक्य ही महावाक्य हैं। आप इनमें से किसी पर ध्यान कर सकते हैं।

### (१) प्रज्ञानं ब्रह्म

ऋग्वेद के ऐतरेय उपनिषद् का है।

यह लक्षण वाक्य है।

ब्रह्म की परिभाषा देता है।

इससे तत्त्वबोध—ज्ञान होता है।

### (२) अहं ब्रह्मास्मि

यह यजुर्वेद के बृहदारण्यक उपनिषद् का है।

यह अनुभव वाक्य है। साक्षीज्ञान देता है।

### (३) तत्त्वमसि

सामवेद के छान्दोग्य उपनिषद् का है। उपदेश वाक्य है।

शिवज्ञान देता है। गुरु शिष्य को बताते हैं।

### (४) अयं आत्मा ब्रह्म

अथर्ववेद के माण्डूक्य उपनिषद् का है। यह साक्षात्कार वाक्य है। ब्रह्म-ज्ञान देता है।

## अहं ब्रह्मास्मि पर ध्यान

निरन्तर भावना करें कि आप शुद्ध सच्चिदानन्द व्यापक आत्मा हैं—मन ही मन जप चलता रहे 'अहं ब्रह्मास्मि' का।

होठ हिलाना नहीं है।

हृदय में निरन्तर भावना रहे।

धीरे-धीरे भाव गाढ़ा होकर मादन, मोहन और महाभाव में बदल जायगा।

आसन पर बैठें।

उत्तर या पूर्व मुंह रहे।

**(१) मैं अनन्त ज्योति हूं।**
**(२) मैं सर्वमय हूं।**
**(३) मैं सर्व व्यापी हूं।**

## श्वास-प्रश्वास में ध्यान

पद्मासन, सिद्धासन या सुखासन में बैठें।

उत्तर या पूरब की ओर मुख रहे।

गुरू और गणेश को प्रणाम करें।

**ॐ श्री सत्-गुरवे नमः**

**ॐ श्री गणेशाय नमः**

आसन पर स्थिर रहें। मन को श्वास में लगायें।

जीव २१६०० बार रोज सोऽहं जपता है।

मनुष्य का जीवन अनेकों सोऽहं से ही बना है न कि अनेक वर्षों से।

प्राणायाम से आप सोऽहं बचा पाते हैं अतः आप अपनी आयु बढ़ा पाते हैं। भीतर श्वास लेते समय आप "सो" और श्वास बाहर जाते समय "हं" का स्वर पाते हैं। सोऽहं जीवनश्वास है। स और ह स्थूलता हटने से यह ॐ ही बच जाता है। कुछ दूसरा नहीं सोचें। श्वास स्वतः स्थिर होने लगेगा—ध्यान लगेगा। आप शान्ति में हैं। आनन्दमय हैं।

## सोऽहं पर ध्यान

ॐ जैसा ही ध्यान है। कुछ लोग हंसः सोऽहं हंसः कहते हैं। सोऽहं ध्यान के पहले आप 'नाहं'—मैं शरीर नहीं हूं—नेति,नेति—कहें। सोऽहं से तात्पर्य है : **मैं वही हूं। मैं ब्रह्म हूं।**

मन ही मन इसे दुहरायें। आप पूर्ण रूप में सोचें "मैं सर्वव्यापी आत्मा हूं।"
हृदय से, मन से, बुद्धि से—यही सोचते रहें।
२४ घंटों का यह ध्यान है।
अन्य सभी संस्कारों को दूर भगा दें।

यदि आप बाघ के मुख में भी क्यों 'न हों' आप 'सोऽहं सोऽहं सोऽहं' की रट लगाते जायें। मैं शरीर नहीं हूं।

तभी आप सच्चे वेदान्ती रह सकते हैं।
आप सच्चिदानन्द में विश्राम करें।
यही आपके सोऽहं रट की देन है।

## सगुण ध्यान

किसी रूप पर ध्यान सगुण ध्यान है। किसी मूर्त्ति पर—शिव, विष्णु, राम, कृष्ण—जहाँ झुकाव ज्यादा हो, जहाँ आकर्षण ज्यादा हो, जहाँ मन रम जाय।

गुरु का बताया ध्यान हो तो सर्वोत्तम है। सद्गुरु ही आपको इष्टदेव का ध्यान देंगे। इष्टदेवता आपको खुद इशारा करेंगे, रुचि देंगे। निशानाबाज या तीर चलानेवाला पहले स्थूल वस्तु पर हाथ चलाता है। निशाना साधता है—फिर लक्ष्य पर, अन्त में सूक्ष्म से सूक्ष्म वस्तु पर वह मारता है। वैसे ही प्रारम्भ में सगुण ध्यान करना है। जब मन शिक्षित हो जाता है, अनुशासित हो जाता है तब वह निराकार और निर्गुण के ध्यान के योग्य हो जाता है। ठोस वस्तु पर ध्यान ही सगुण ध्यान है। निर्गुण ध्यान ठोस विचार पर होता है। सगुण उपासना से विक्षेप नष्ट होता है। **३ या ६ मास किसी चित्र पर त्राटक करें।**

त्राटक अभ्यास के बाद मूर्त्ति के मानसचित्र पर आधा से दो घंटों का ध्यान **त्रिकुटी या भ्रूमध्य में करें।** यह देखें और अनुभव करें कि संसार के सभी पदार्थों में **इष्ट देवता मौजूद हैं।** जबतक ध्यान करते हैं उनके मन्त्र का मानस जप करें। देवता के सर्वव्यापित्व को सोचें, उनके गुणों पर चिन्तन करें। यह भी अनुभव करें कि इष्टदेव से सात्विक गुण हमारी ओर चले आ रहे हैं और हममें अमृतत्व भर रहे हैं। यह सात्विक या शुद्ध भावना है। **एक या दो वर्षों में आपको इष्टदेवता के दर्शन होंगे।** आप अपनी साधना में दृढ़ हैं, लगन में पक्के हैं, धुन के सच्चे हैं तो ऐसा ही होगा। आप **मूर्त्ति** के विभिन्न अंगों पर मन को चलायें। त्राटक से सगुण ध्यान पक्का रहता है। देखें तो मुरलीमनोहर की एक मधुर झाँकी :—

> धूल भरे अति शोभित श्यामजू तैसी बनी सिर सुन्दर **चोटी**
> खेलत खात फिरत अंगना, पग **पंजनी** बाजत पीली **कछोटी**
> वा छवि को रसखान बिलोकत वारत **कामकला** निधि कोटी
> काग के भाग कहा **कहिये**, कि हाथ से लै गयो **माखन रोटी।**

इस पद में भगवान खेल भी रहे हैं, खा भी रहे हैं। आप एक-एक शब्द पर ध्यान कर तन्मयता पा सकते हैं, खेल भी सकते हैं—खा भी सकते हैं। सखा बनकर देखिये न! कौआ उनका सखा है, आप क्यों नहीं? पकड़िये उन्हें—झपटिये प्रसाद।

पहले आपने विराट पुरुष पर ध्यान किया।
फिर उनके सगुण रूप को पाया।
अब निर्गुण में आइये।

## निर्गुण ध्यान

यह ॐ पर ध्यान है। यह ठोस विचार पर ध्यान है। पद्मासन पर बैठें। मन ही मन ॐ का जप करें। **मन में सदा ॐ का ही जप करें।** आप भावना

करें कि आप सर्वव्यापी अनन्त ज्योति हैं। आप शुद्ध, सच्चिदानन्द व्यापक आत्मा हैं, शुद्ध-सिद्ध-बुद्ध, मुक्त। शाश्वत स्वतंत्र ब्रह्म हैं, आप चैतन्य हैं, एक रस है, शान्त हैं अखण्ड हैं, परिपूर्ण हैं, अव्यय हैं, अभेद हैं। आपकी प्रत्येक नाड़ी, प्रत्येक शिरा, प्रत्येक धमनी, प्रत्येक परमाणु—सदा इसी भावना से भरा रहे, ओतप्रोत रहे। ओष्ठ से ॐ जप की कोई जरूरत नहीं। हृदय से जप हो, मानस से जप हो, आत्मा से जप हो।

आप नित्य चैतन्यमय हैं—यही भाव निरन्तर बना रहे आपमें—हिलोरें लेता रहे। आप ॐ के जप के समय देहभाव भूल जायें। आप सोचें, भावना करें, मन ही मन जपें—

| | |
|---|---|
| **अनन्त में हूं** | ॐ ॐ ॐ |
| **सर्वज्योति में हूं** | ॐ ॐ ॐ |
| **सर्वानन्द में हूं** | ॐ ॐ ॐ |
| **सर्व महिमा में हूं** | ॐ ॐ ॐ |
| **सर्व सत्ता में हूं** | ॐ ॐ ॐ |
| **सर्वज्ञान में हूं** | ॐ ॐ ॐ |
| **सर्वोल्लास में हूं** | ॐ ॐ ॐ |

निरन्तर ध्यान करें इसी भाव से।
उत्साह चाहिए, लगन चाहिये, प्रेम चाहिए।
आप अनुभूति पायेंगे।
आप दो या तीन वर्षों में **आत्म-दर्शन पायेंगे**।

निर्गुण या वेदान्त साधना में इच्छा और मनन मुख्य हैं। पहले श्रवण, तब मनन और फिर निदिध्यासन। इसी से आत्म साक्षात्कार होता है—**अपरोक्षानुभूति** होती है।

गर्म लोहा पर जैसे एक बूंद जल तुरन्त विलीन हो जाता है वैसे ही मन और आभास चैतन्य ब्रह्म में विलीन हो जाते हैं।

जो बच जाती है वह है **चिन्मात्रा**।

वेदान्त-साधना के श्रवण, मनन और निदिध्यासन ही पतञ्जलि के योग में धारणा, ध्यान और समाधि है।

मन्त्र की पूजा, ध्यान एवं जप से मन तदाकार हो जाता है और इष्ट देवता के सान्निध्य से नित्य शुद्ध हो जाता है। समाधि में मन अपनापन भूल जाता है।

ध्येय वस्तु के संग तद्रूप-तदाकार हो जाता है।
ध्याता—ध्येय, पूजक-पूज्य, विचारक-विचार्य।
दृक—दृश्य, अहं—इदं, प्रकाश—विमर्श ••• •••
—बस—एक ही हो जाते हैं, एक ही रहते हैं।

## निर्विकल्प समाधि

दो प्रकार की है। एक में ज्ञानी विचारों के रूप में अपने में सारे संसार को देखता है। वह ब्रह्म में विश्राम करता है—ब्रह्म की भाँति ही सारे संसार को अपने में देखता है। यह स्वरूप—विश्रान्ति है। भगवान कृष्ण, दत्तात्रेय, श्री शंकर, ज्ञानदेव का ऐसा ही अनुभव रहा। दूसरे में=विचार से संसार लुप्त हो जाता है। ज्ञानी शुद्ध निर्गुण ब्रह्म में आराम करता है, रज्जु—सर्प न्याय की भाँति। जब राजयोगी सविकल्प समाधि छोड़ते हैं तो ब्रह्माकार वृत्ति से निर्गुण ब्रह्म में वे ज्ञानी से मिलते हैं।

## सगुण उपासक

सगुण उपासक भक्त अपने प्रभु को सर्वार्पण कर देता है। सब तेरा ही है। वह अपने प्रभु का श्रृंगार करता है, समादर करता है। और उन्हें ही आत्म निवेदन कर देता है। वह अपने भोजन, रक्षा और अस्तित्व के लिए उन्हीं पर निर्भर रहता है। कोई भी सहायता वह अपने इष्टदेव से ही पाना चाहता है। उसका अपना स्वतन्त्र कोई कार्य नहीं। वह प्रभु के हाथ का एक यन्त्र मात्र रहता है। उसके सभी अंग—हाथ-पैर-आँख-मुंह-कान—प्रभु के ही होते हैं। वह भक्त ज्ञान या लय को पसन्द नहीं करता। वह अपने प्रभु से अलग उनका दास होकर, उनका प्रेमी होकर, पुजारी होकर रहना पसन्द करता है। यह कार्पण्य का तरीका है संकोच, का मार्ग है। मान लें एक बिन्दु-केन्द्र बिन्दु हैं आप एक वृत्त में। आप किसी स्थान पर सिकुड़ कर परिधि में मिल जाते हैं। भावुक भक्तों के लिए है यह। अनेकों हैं, दिव्य हैं, सुकृतभक्त हैं सभी। यहाँ साधक चीनी खाना स्वाद लेना पसन्द करता है—ज्ञानी की भाँति चीनी बन जाना नहीं चाहता।

## निर्गुण उपासक

यहाँ साधक स्वयं ब्रह्मभाव से ओतप्रोत रहता है।
अहंकार, मन, शरीर को वह मान्यता नहीं देता।

वह आत्म-निर्भर रहता है ।
वह विचार करता, आत्मा पर ध्यान करता है ।
वह चीनी बन जाना चाहता है, स्वाद लेना नहीं ।
यह फैलाव का मार्ग है ।
मान ले एक वृत्त में आप केन्द्र बिन्दु हैं ।
आप इतना फैलते हैं कि पूरे वृत्त और परिधि पर छा जाते हैं ।
इस ध्यान के उपयुक्त कम ही लोग बच पाते हैं ।
प्रभु आपको सफल करें ।

# विशेष साधना

## मौन

मौन शान्ति का व्रत है । अध्यात्म—जीवन का एक अनिवार्य अंग है । बात-चीत में शक्तिपात होता है । अनर्गल शक्तिपात से बचने के लिए मौन साधें । ओज-शक्ति जमा होगी । ध्यान में सहायता मिलेगी । छान्दोग्य उपनिषद् के अनुसार वाक् तेजोमय है । अग्नि के स्थूल भाग से हड्डी पुष्ट होती है, मध्य भाग से मज्जा और सूक्ष्म-भाग से वाक् । यह सदा स्मरण रहे । श्री कृष्णाश्रम जी महाराज आठ वर्षों तक हिमालय के बर्फ में कठिन मौन साधना करते रहे हैं । काष्ट मौन में आप अपने विचारों को लिख कर भी नहीं भेज सकते हैं । जब इन्द्रियाँ शान्त रहती हैं तो इन्द्रिय-मौन या करण साधन कहते हैं । शरीर को स्थिर, जड़वत् रखते हैं तो काष्टमौन कहते हैं । सुषुप्ति में हम सुषुप्ति मौन रहते हैं । सच्चा मौन वही है जहाँ न द्वन्द्व हो न वियोग । मन के सभी रूपान्तर बन्द होवें । यह महामौन है ।

परब्रह्म है ।

## अन्तरंग साधना

निष्काम कर्मयोग एक बहिरंग साधन है जो आपको 'अहं ब्रह्मास्मि' के साधन या ध्यान की ओर ले जाता है । साधन चतुष्टय से बाहर ही है कर्म । ये चारों श्रवण से बाहर हैं । श्रवण मनन से बाहर, मनन भी निदिध्यासन से बाहर है ।

## निदिध्यासन अन्तरंग साधना है,
## 'अहं ब्रह्मास्मि पर ध्यान है।'

पतञ्जलि के अष्टाङ्गयोग में भी बहिरंग और अन्तरङ्ग साधना है।
यम, नियम, आसन, प्राणायाम और प्रत्याहार—**बहिरंग साधना है।**
धारणा, ध्यान और समाधि—**अन्तरङ्ग साधना है।**

## स्वर-साधना

श्वास, प्रश्वास की प्रकृति जानने से व्यक्ति त्रिकालदर्शी हो सकते हैं। गुप्त-विज्ञान है यह। सत्य का प्रकाशक है। यह चिन्तामणि है ज्ञानियों का। विश्वास, रुचि और ध्यान से यह विज्ञान समझ में आता है। अविश्वासियों को यह चमत्कृत कर सकता है। स्वर में **वेद और शास्त्र हैं।** स्वर परब्रह्म की चमक है। श्वास की शक्ति से मित्र निकट आ जाते हैं। ७२००० नाड़ियाँ शरीर में है। सर्पाकार कुण्डलिनी मूलाधार में सोयी रहती है—यहाँ से १० नाड़ियाँ ऊपर और १० नीचे जाती हैं। इनमें इड़ा, पिंगला और **सुषुम्ना** मुख्य हैं। इड़ा वाम में है, पिङ्गला दायें, सुषुम्ना मेरुदण्ड के मध्य में है। इन्हीं नाड़ियों से **प्राण प्रवाह** शरीर के विभिन्न अंगों में जाता है। इड़ा बाँयी नासिका छिद्र से बहती है, पिंगला दाँयी से। **सुषुम्ना दोनों से चलती है।** इड़ा चन्द्रनाड़ी है, पिंगला सूर्यनाड़ी है। जीव सदा सोऽहं जपता रहता है। भीतर श्वास आने में 'सो' और बाहर जाने में 'हं' हम देखते हैं। प्राण और मन को शीतल रखें। दोनों नाड़ी सम रखनेवाले बड़े काल-द्रष्टा होते हैं। इड़ा में अमृत है, पोषण करती है विश्व का। दायें में विश्व सदा जन्म लेता है। सुषुम्णा में वह गति पाता है। चन्द्रनाड़ी चलते समय सौम्य कर्म करें, सूर्यनाड़ी के समय क्रूर कर्म करें—योगसिद्धि **सुषुम्णा** में करें।

सूर्य और चन्द्र की अवधि ५ घटी तक रहती है याने दो घंटों तक। वे क्रम से चलती हैं, दिनरात की साठ घटियों में। फिर एक घटी कर तत्त्वप्रवाह चलता है। दिन प्रतिप्रदा से शुरू होता है। जब क्रम उलटा रहता है तो परिणाम उलट जाता है। शुक्लपक्ष में बायाँ शक्ति शाली होता है। कृष्ण पक्ष में दाँया शक्तिशाली होता है। सूर्योदय समय जब श्वास इड़ा में रहता हो और सूर्यास्त में पिंगला रहे—तो परिणाम अच्छे होते हैं।

इड़ा से चलने दें श्वास दिनभर सूर्योदय से—शाम तक।
सूर्यास्त से पिंगला—रातभर—सुबह तक।
यही स्वर साधन है। इसके अभ्यासी योगी से अभ्यास कर देखें।

अमृत पीने को जग जायें। गप्पें छोड़ें—आलोचना छोड़ें। उपयोगी कुछ करें।

## धारा बदलना

इड़ा से पिंगला में धारा बदलने की क्रिया है। पिंगला से इड़ा में बदलनी हो तो उल्टा करें—

(१) बाँयी नासिका छिद्र को रूई या कपड़े से भर दें—कुछ मिनटों तक।

(२) दस मिनट बाँयी करवट लेट जायें।

(३) सीधा बैठें—बायें घुटने को मोड़ें—बाँयी एंड़ी बायें जाँघ में सटायें—बाँयी हथेली घुटना पर—थोड़ी देर में पिंगला चलेगी।

(४) दोनों एंड़ी दायें जाँघ तक ले जायें। दायें घुटने को बायें घुटने पर रखें। बाँयी हथेली भूमि पर दें।—शरीर का भार बायें हाथ पर दें। बाँयें पैर को दायें हाथ से पकड़े रहें।

(५) नौलि से बदलें।

(६) योगदण्ड के U भाग पर बायीं भुजा को विश्राम दें।

(७) खेचरी करें—जीभ मोड़कर मार्ग बन्द करें।

## लम्बिकायोग

खेचरी का अभ्यास ही लम्बिका योग है। इसके अभ्यास से भूख प्यास मिट जाती है। वह आकाश भ्रमण कर सकता है। यह योगी गुरु से सीखेंगे। योगीजन इसे गुप्त रखते हैं। यही सब सिद्धियाँ देती है-खेचरी मुद्रा-राजा है मुद्राओं का-

**खेचरी मुद्रा**

**शाम्भवी मुद्रा**

**अश्विनी मुद्रा**

**महामुद्रा**

**योग मुद्रा - मुख्य मुद्रायें हैं।**

खेचरी के दो अंग हैं—(१) **छेदन**

(२) **दोहन**

जीभ के निचले भाग की पतली मांस-रस्सी को केश की चौड़ाई के बराबर एक तेज छुड़ी से काटते हैं, सप्ताह में एक बार। उस पर पाउडर (Turmeric) छीट देते हैं। यह कुछ महीनों तक चलता है। यह छेदन किया है। अब जीभ पूरी लम्बी हो जाती है मक्खन लगाते-लगाते—फिर जीभ बाहर करते-करते—उलटते इसे और नासिका छिद्र के पिछले भाग में सटाते हैं।

अब आप बैठे और ध्यान करें।

श्वास पूरा रुक जाता है।

कुछ लोगों के लिए जीभ का काटना और लम्बा करना जरूरी नहीं है। जो इस मुद्रा की पूर्णता प्राप्त करते हैं वे आकाश भ्रमण करते हैं। रानी चूड़ाला को यह सिद्धि थी।

इस मुद्रा से योगी अपने को पृथ्वी में अन्दर गाड़ कर आराम से रह सकता है।

## लय योग

इन्द्रिय अनुभूति की सभी पदार्थों को जब हम भूल जाते हैं और अपने ध्येय के ध्यान में निमग्न हो जायें तो वह लय है। लय से पञ्चतत्त्वों पर हम विजय पाते हैं। मन और इन्द्रियों को हम वश में करते हैं।

मन, शरीर, प्राण—सभी दास हो जाते हैं। लययोग के लिए शाम्भावी मुद्रा एक स्वस्थ साधन है। षट्चक्रों में किसी पर हमारा ध्यान रहता है।

**त्राटक**—एकटक दृष्टि एक पदार्थ पर लय-योग में सहायक है। वह जीवन्मुक्त हो जाता है।

## अनाहतनाद

रहस्यमय नाद हैं जो ध्यान में सुन पड़ते हैं। इससे नाड़ी-शुद्धि होती है। ये मन्द और जोर के शब्द होते हैं। यह ॐकार ध्वनि है। अनाहत केन्द्र से—सुषुम्ना नाड़ी से इनका गमनागमन होता है।

### —तरीका—

अपने आसन पर बैठ जायें। कानों को अँगूठों से बन्द करें। आँखें भी बन्द कर लें। सुनें स्वर। प्रारम्भ में जोरों की ध्वनि सुनेंगे। मन चिदाकाश में रम जाता

है। जैसे मधु पीनेवाली मक्खी उसकी सुगन्धि की परवाह नहीं करती वैसे ही चित्त नाद-श्रवण में इतना लीन हो जाता है कि इन्द्रियों के विषयों की परवाह नहीं करता।

**प्रणव**—से निकलने वाले ये नाद बड़े चमत्कारी होते हैं। मनोलय हो जाता इनमें। जब तक नाद सुन पड़ता है मन रहता है परन्तु बन्द होने पर **तुरीया** रहती है। यह सर्वोच्च आसन है। ऊपर उठने पर **उन्मनी** है। मन का लय हो गया है—प्राण भी उसीमें डूब गया है।

यह निरन्तर नादानुसन्धान का परिणाम है।

**नाद**—दशविध हैं।

| | |
|---|---|
| (१) चिनि | (६) ताल-तबला |
| (२) चिन्-चिन् | (७) बड़ी मुरली |
| (३) घटी | (८) भेरी-ढोलक |
| (४) शंख | (९) मृदङ्ग |
| (५) वंशी | (१०) मेघनाद |

दशम् नाद **सद्गुरु-कृपा से जानें, सुनेंगे।**

नाद में लय आपने देखा।

**नासिकाग्रदृष्टि** से भी लय पा सकते हैं आप।

लय-चिन्तन से आप संसार को फूंक उड़ा सकते हैं।

## लिखित जपयोग

वैखरी, उपांशु और मानस-जप के अभ्यास में लिखित जप का बड़ा महत्त्व है। मन एकाग्र रहता है, ध्यान पक्का रहता है।

शरीर और मन शुद्ध होता है।
मौन स्वयं रहता है।
आँखें स्थिर रहती हैं।
मन ही मन जप चलता है।
नियमबद्ध जप पूरा होता है।
एकरसता, एकतानता रहती है।

**मननात् त्रायते इति मन्त्रः**

मनन पूरा होता है।

## महायोग

यह अध्यात्म ज्ञान बाँटना है। यह ज्ञान दान है।
यह ज्ञान यज्ञ है।

## मन्त्र-योग

मन के रास्ते यह सिद्ध होता है सो मन्त्रयोग कहलाया।
मन्त्रशक्ति आपकी साधन शक्ति को पुष्ट करती है।
**मन्त्र स्वयं देवता है।** ध्वनि या नाद चार हैं।

(१) **बैखरी**—स्पष्ट, सुनाई पड़ने योग्य, भेदमय है।
(२) **मध्यमा**—अन्तरंग, सूक्ष्म, आकाशमय बाहरी कान को श्रव्य नहीं है।
(३) **पश्यन्ती**—अन्तरतर, सूक्ष्मतर, आकाशमय
(४) **परा**—मूल है, कारण है—अव्यक्त है।

**'मन्त्राणां अचिन्त्य सामर्थ्यं''**—इसी से यह मन-दर्पण के मैल को धो देता है। प्रणव, महामन्त्र, गायत्री, महामृत्युञ्जय—इत्यादि प्रमुख मन्त्र हैं।

**मन्त्र-दीक्षा** की महिमा अनन्त है। सद्गुरु की दया से आप मन्त्र चैतन्य पावें।

## नमस्कार-योग

भगवान कृष्ण ने उद्धव को नमस्कार-योग की शिक्षा दी थी। इससे सीमित अहंकार भागता है।

## नाद-योग

योगी इसमें लय पाते हैं। आसन लगाकर पावें। **परावाक्** की अनुभूति करेंगे।
**निदिध्यासन**—तदाकार-तन्मय-तद्रूप पर पूर्व में आप सुन चुके हैं।

## उर्ध्वरेता-योग

इसमें वीर्य से युक्त ओजशक्ति मस्तक की ओर फैलती है—ध्यान लगता है। वीर्यशक्ति ही चैतन्य-शक्ति में परिवर्तित होकर प्रकाशमय रखती है।

**लिङ्ग-शरीर** पर साधक शासन करता है—स्वतंत्र-मुक्त रहता है।

## प्राकृतिक योग

यह सांख्य पर आधारित है। तत्वों की वास्तविकता को अव्यक्त की वास्तविकता से पहचानते हैं। आप भूत या पदार्थ पर ध्यान करते हैं, विभिन्न तत्वों पर ध्यान करते हैं और तत्वों से अन्तर—बाह्य स्वरूप का अनुभव करते हैं। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्र और यजमान पर ध्यान करते हैं। कुछ शैव अपने में ही इन आठो को पाते हैं यथा—

सर्वाय—सर्वाय क्षितिमूर्तये नमः
भावय—भावय जल ,, ,,
रुद्राय—रुद्राय अग्नि ,, ,,
उग्राय— वायु ,, ,,
भीमाय— आकाश ,, ,,
पशुपतय— यजमान ,, ,,
महादेवाय—सोम ,, ,,
ईशानाय— सूर्य ,, ,,

## प्रपत्ति-योग

आत्म-निवेदन या सर्वार्पण ही प्रपत्ति है। हमारे समर्पण के अनुपात में ही कृपा का अवतरण होता है। आत्म निवेदन में दो बाधायें हैं (१) अहंकार (२) कामना।

## प्रेम-योग

विश्वप्रेम का अन्त अद्वैत में हो जाता है। सत्संग से ही यह हो पाता है।

## पूर्ण-योग

आपकी कामनायें समाप्त हो गई हैं। आत्मा को आपने परिपूर्ण रुप में पा लिया है। परिपूर्ण ही आनन्दघन है। यही आपकी दिव्यात्मा है।

विवेक, वैराग्य, षट् सम्पत्ति और मुमुक्षत्व चाहिये।

गुरु भक्ति-रखें

पूर्णब्रह्म-योग—अखण्डानन्द है।

## राज-योग

अष्टाङ्ग-योग है महर्षि पतञ्जलिका।

पूर्व में ही कहा गया है इस पर, ग्रन्थि खुल जाती है। कैवल्य मोक्ष पाते हैं। इसमें कुछ गुप्त है जिससे सब प्रकट होते हैं।

## समाधि-योग

जड़ समाधि—पृथ्वी-गर्भ में खेचरी करते हैं।

चैतन्य समाधि—पूर्ण चेतना रहतीहै—योगी अपनी विलक्षण अनुभूति से युक्त सदा सावधान रहते हैं।

**समाधि, मुक्ति, तुरीय—सामान्तर हैं।**

## समत्व-योग

ज्ञानयोग के लिये यह आधार तैयार करता है।
यह निष्काम कर्मयोगमय है।
सब तर्क आत्मा में विश्राम पाते हैं।

## सांख्य-योग

२५ तत्त्वों का ज्ञान मुक्ति का साधन।
तीन गुण हैं।
प्रकृति का अनुभव—
प्रकृति—विकृति का अनुभव।
अनुभव मात्र।

पञ्चभूत, पञ्चतन्मात्रा, पञ्चकर्मेन्द्रिय, पञ्च ज्ञानेन्द्रिय, अन्तःकरण चतुष्टय और जीवात्मा-इन्हीं का परिचय लेना है। पुरुष साक्षी है। कैवल्य है, द्रष्टा है, मध्यस्थ है और उदासीन है।

**ज्ञात—पुरुष है—स्वाधीन है।**

**ज्ञेय—प्रकृति है—बन्धमयी है।**

## ज्ञानी

पूर्ण ज्ञानी का दृष्टिकोण ही दूसरा हो जाता है।
उसकी अलग आँखें होती हैं।
प्रत्येक वस्तु को वह अपनी विशेषदृष्टि से देखता है।

हर जगह वह आत्मा का दर्शन करता है।
व्यक्तिगत कुछ भी नहीं होता उसमें।
लघु आत्मा छिन जाती है उसकी।
उसमें स्वार्थ तनिक भी नहीं होता।
वह दूसरों की सेवा के लिए ही रहता है।
विश्व को वह अपनी ही आत्मा समझता है।
उसकी दिव्यदृष्टि सदा दिव्य भाव देती है।
नदी सागर से मिलकर सागर ही हो जाती है।
वैसे ही वह सदा सच्चिदानन्दमय चैतन्य में मिला हुआ रहता है।
वह दूसरों के हित के लिए ही सोचता और करता है।
उसे चिन्ता, फिक्र नहीं सताती।
वह सदा प्रसन्न रहता है। वह सुख-दुख नहीं पाता।
उसका सर्वाङ्गीन विकास हुआ रहता है।
वह दया, क्षमा, प्रेम, धैर्य, शान्ति की मूर्त्ति रहता है।
उसकी महिमा अपार है वह ब्रह्म ही है।
अपने सत्संकल्प से वह चमत्कार पूर्ण रहता है।

## सविकल्प समाधि

त्रिपुटी युक्त मन जब ब्रह्म से मिला होता है ज्ञाता-ज्ञान-ज्ञेय-युक्त रहता है, द्रष्टा, दृश्य रहते हैं तब तक सविकल्प समाधि है।

## निर्विकल्प समाधि

मन अद्वितीय ब्रह्म में रमा रहता है।
त्रिपुटी नहीं रहती है।
सविकल्प अवस्था एक माध्यम है निर्विकल्प के लिए।

प्राण + अपान—छाती और गुदा में भ्रमण करते रहते हैं। यौगिक बन्ध से मिल जाते हैं दोनों और सुषुम्णा में धकेल दिये जाते हैं। प्राण—मन को खींचकर सुषुम्णा में ले आता है और दृश्य प्रपञ्च का मिथ्यात्व दिखा देता है। संसारभाव समाप्त।

# रहस्यमय-अनुभव

## मन घूमता है

ध्यान के क्रम में ज्योंही आप अग्रसर होते हैं तो कुछ ही दिनों में आपका शरीर हल्का होने लगता है। आप पद्मासन, सिद्धासन या सुखासन में बैठे होते हैं। आप या तो देहभाव की थोड़ी स्मृति रखे हैं या भुला भी चुके होते हैं। ध्यान लगाने से आपको निराला आनन्द आ रहा है। यह ध्यान जनित आनन्द इन्द्रिय सुख से भिन्न हीं है। अपनी बुद्धि से आप दोनों की परख कर लेते हैं। धारणा और ध्यान से बुद्धि तीक्ष्ण हो गई है। शिक्षित बुद्धि में बड़ी शक्ति होती है परख की। ध्यान का आनन्द विलक्षण होता है, स्थायी होता है। आत्मतृप्त रहते हैं आप। आप देखते हैं मन गति-मान हो रहा है—अपने—मूल आसन पर—**यथा स्थान** पर जा रहा है। ध्यान ने नये सुखद मार्ग बनाये हैं मन की यात्रा के लिए। नया मानस है, नई भावना है, नयी उमंगे हैं और नई उत्तेजनायें हैं आप में—

## पृथक होने की भावना

आप ध्यान करते-करते एक दिन ऐसा अनुभव करते हैं कि आप अपने शरीर से अलग हो गये हैं। आपको आनन्द भी अपार है, थोड़ा भय भी है। आनन्द इसलिए है कि आपको नयी ज्योति मिल गई है, नया लिंग शरीर मिला है; भय इसलिए है कि आप नये लोक में आ गये हैं, एक दम नया क्षेत्र है। आप पाते हैं कि आपका वायव्यात्मक शरीर है, हल्का-सा, बहुत हल्का शरीर है, आकाश में हैं, आप, स्वर्णिम ज्योति है आपके चतुर्दिक—आपके चारों ओर ज्योतिर्मय पदार्थ हैं, दृश्यावलियां हैं। आप नृत्यमय हैं या तैर रहे हैं हवा में…… कभी-कभी **गिरने** का भय लग रहा है। **आप कभी नहीं गिरेंगे**—नये अनुभव से आपको ऐसा लग रहा है—गुरु-गुरु है न? आपने कैसे शरीर छोड़ा है अभी आपको पता नहीं है। आपने तुरन्त चल ही दिया था—जब आप अलग हुए थे—जब आप नये क्षेत्र में, नीली ज्योति के क्षेत्र में आये हैं—कभी-कभी चमक भी देखते हैं—सफेद—शुक्ल—धवल ज्योति—फिर श्याम—फिर पीली ज्योति—पीतवसना—पीताम्बरा गुरुवर्ण—सुनहली ज्योति—आप इस दृश्य को देखकर मग्न हैं। नया आनन्द अकथ है, वर्णन से परे है। आपको ही भावना करनी है, अनुभव भी करना है। आपने कैसे शरीर छोड़ा अज्ञात है परन्तु आपको लौटना है यह ध्यान में हैं। आप एक छोटे छिद्र से लौट रहे हैं, आहिस्ता वापस आ गये हैं यह भाव ख्याल है। आपको आकाशमय, वायुमय भावनाओं ने ओतप्रोत कर रखा है। जिस तरह खिड़की के एक छिद्र से हवा घुस

जाती है वैसे ही आप अपना नया लिङ्गशरीर लेकर---ज्योतिर्मय शरीर लेकर लौट रहे हैं अपने स्थूल शरीर में---पाञ्चभौतिक शरीर में। अब आ गये हैं आप। स्थूल और सूक्ष्म स्तरों के जीवन को जाँच सकते हैं आप। यह भावना प्रबल हो रही है कि आप फिर उसी क्षेत्र में जायें---वहीं रहें या ज्यादा देर वहीं रहें। परन्तु नये क्षेत्र में आप पाँच या दस मिनट से ज्यादा नहीं रह पाते हैं। शुरु-शुरु में आप अपनी इच्छा के अनुसार शायद ही शरीर से अलग हो पाते हों। साधना के फलस्वरूप आप महीने में एकाध बार ऐसा कर पाते हैं। आप धैर्य रखें, संयम रखें, दृढ़ता रखें। आप इच्छानुसार छोड़ सकते हैं शरीर, पा सकते हैं ज्योतिर्मय लिंग शरीर और अटक सकते हैं नये क्षेत्र में जाकर। स्थूल शरीरमय भावों से आप सुरक्षित रहें। आपने देहाध्यास पर विजय पा ली है। आप दो तीन घंटों से भी अधिक ठहर सकते हैं वहाँ। आप सुरक्षित रहेंगे। मौन एवं ध्यान के निरन्तर-अभ्यास से आपको सफलता मिलेगी। विचारों को चुप कर दें, मन को शान्त कर दें, तब कोई कठिनाई नहीं होगी।

## कैवल्य

के परम सौन्दर्यमय आनन्द के लिए :—

**१. पहले शरीर से अपने को अलग करें।**

**२. मन के संग सूक्ष्म शरीर में लगें।**

**३. ध्यान से देह भाव से उठकर ब्रह्म से एक हों**
**समाधि लें—**

ये ही हैं अन्तरङ्ग साधनाएं कैवल्य के लिए।

## आकाश-भ्रमण

शरीर से बाहर, लिङ्गशरीर लेकर आपको घूमने की इच्छा है तो चलें। अहंकार से या विश्व-भण्डार घर से या तन्मात्राओं के सागर से आवश्यक सामग्री लेकर चल दें। योगियों के लिए सुलभ है। उनके पास व्यापक जानकारी है। विचार पढ़ना, दूसरों में विचार भरना—सभी आप अपने लिङ्गशरीर से कर सकते हैं। ये सिद्धियाँ हैं। इनमें आप उलझें नहीं। लक्ष्यतक साधना करते चलें।

## ध्यान में ज्योति-दर्शन

भाव घनीभूत होता है। ध्यान गाढ़ा लगता है। अनेक प्रकार की ज्योतियाँ दीख पड़ती हैं। प्रारम्भ में चमकीली शुक्ल ज्योति दीख पड़ती है जिसका आकार

खोबी के छोटे दाने जैसा होता है। **त्रिकुटी** में यह भासती है जो लिङ्ग शरीर या सूक्ष्म शरीर के आज्ञाचक्र के समकक्ष है। जब आँखें बन्द होती हैं तो आप विभिन्न रंगों की ज्योति देखते हैं जैसे सफेद, पीत, लाल, धूम्रवर्ण, नीली, हरी, मिश्र रंग, बिजली-सी, अग्नि-सी, जलते कोयले-सी, जुगनू-चमक-सी, सूर्य, चन्द्र और तारों जैसी। ये ज्योतियाँ **चिदाकाश** में भासती हैं। ये तन्मात्रा की ज्योतियाँ रहती हैं। प्रत्येक तन्मात्रा की अपनी विशेष ज्योति होती है। पृथ्वी की पीली, जल की सफेद, अग्नि की लाल, वायु की धूम्रवर्ण, आकाश की नीली ज्योति होती है। पीत और शुक्ल ज्योति बहुधा देखने में आती है। लाल और नीली कभी-कभी दिखाई देती है। कभी-कभी पीत और शुक्ल ज्योति मिली हुई होती है। शुरू-शुरू में सफेद ज्योतिकण आँखों के आगे तैरते मिलते हैं। जब आप इन्हें देखें तो सोचें कि **मन स्थिर हो रहा है, ध्यान में आप प्रगति कर रहे हैं**। कुछ महीनों के बाद ज्योति का आकार बढ़ने लगता है और आप वृहत् ज्योति-सूर्य से भी विशाल ज्योति देखते हैं। आपके ललाट से तथा दोनों किनारों से ये आती हैं। तब—महानन्द का क्षण होता है और बार-बार देखने की लालसा जगती रहती है। जब आपका दो या तीन घंटों का अभ्यास लग जाता है—लगातार तो ये ज्योतियाँ भी काफी देर तक टिकी रहती हैं। साधना में ज्योतिदर्शन से प्रर्याप्त प्रोत्साहन मिलता है। यह आपको ध्यान में स्थिर रहना सिखाता है।

**अतिमानस क्षेत्र में यह आप में विश्वास भरता है**। ज्योति-दर्शन होना ही बताता है कि आप भौतिक स्तर से ऊपर उठ रहे हैं, स्थूल-जीवन को पार कर रहे हैं। आप ज्योति देखते समय बहुधा अर्द्ध-चैतन्य में होते हैं। आप दो क्षेत्रों के मध्य में होते हैं। जब ज्योतियाँ आती हैं, आप **शरीर न हिलायें**। आप अपने आसन पर दृढ़ रहें। आप मन्द-मन्द श्वास लेते रहें। कभी-कभी आप चकाचौंध करनेवाली ज्योति भी देख लेते हैं। इनपर एकटक देखना भी दुरुह मालूम पड़ता है। आप अपनी दृष्टि हटा लेते हैं। यह **चकाचौंध वाली ज्योति सुषुम्णा की होती है**। आप ज्योतियों में कुछ आकार भी देखेंगे। **इष्टदेवता की ज्योति या स्थूल रूप** भी सामने आते हैं। आप अपने इष्टदेव की चार भुजायें देखेंगे। उनके आयुध हथियार देखेंगे—सुन्दर वस्त्र देखेंगे। आप देवताओं के समूह देखेंगे, गन्धर्व, अप्सरा, किन्नारों के यूथ देखेंगे, उनके मधुर संगीत सुनेंगे, सुन्दर वाद्य-वृन्द उनके हाथों में पायेंगे। आप सुन्दर वाटिकायें, कुञ्ज, निकुञ्ज देखेंगे, मनोहर मन्दिरों को देखेंगे, हरियाली प्यारी सुषमाओं को देखेंगे जिनकी अनुपम छटा का पूरा वर्णन नहीं हो सकता।

ये अनुभूतियाँ साधकों में भिन्न-भिन्न प्रकार की होती हैं। एक साधक की अनुभूतियाँ दूसरे से भिन्न भी हो सकती हैं। बहुत-से लोग इन्हीं सबको देखकर समझ बैठते हैं कि हमने आत्म साक्षात्कार कर लिया। "हम पक्के हो गये"—और ऐसा ही सोच कर वे अपनी साधना छोड़ देते हैं। नया पंथ चलाते हैं और लोक संग्रह के नाम पर चक्कर काटते हैं। यह भ्रान्ति है। यह साक्षात्कार नहीं। यह **तो आपके इष्ट देवता द्वारा आपके हित में प्रोत्साहन मात्र है।**

आप आगे बढ़ें। ब्रह्म-तत्त्व पावें। ये ज्योतियाँ कुछ लोगों को थोड़े ही दिनों में दीख पड़ती हैं और कुछ में देर से। यह साधक की मनोदशा पर निर्भर है।

## चकाचौंध करने वाली ज्योति

ध्यान-क्रम में आप कभी-कभी विशाल चकाचौंध भरी ज्योति को देखते हैं। यह सफेद-शुक्ल वर्ण की होती है। प्रारम्भ में ये आती हैं और चली जाती है। बाद में वे स्थिर रहती हैं और ध्यान-क्रम के अनुरूप दश-पन्द्रह मिन्टों तक अटकती हैं। जो त्रिकुटी पर ध्यान करते हैं उन्हें ललाट में ज्योति दर्शन होता है, जो सहस्रार में ध्यान करते हैं उन्हें मस्तक के उर्ध्वभाग में ज्योति-दर्शन होता है। आप ज्योति की प्रखरता को न सँभाल पाते हैं तो अपने को उधर से हटा लेते हैं। कुछ लोग तो भयभीत हो जाते हैं और नहीं समझ पाते कि क्या करना चाहिए। वस्तुतः अभ्यास जारी रखना है। जिन्हें जहाँ मन रमे त्रिकुटी में या सहस्रार में, ध्यान करेंगे। बदलें नहीं। स्थिरता सराहनीय है। जिन प्राणियों से ध्यान के समय आप मिलते हैं वे सूक्ष्म लोक के रहते हैं—ज्योति लोक के होते हैं। स्थूलता रहित हैं वे। अन्यथा वे आप ही की तरह हैं। उनका सूक्ष्म शरीर है। वे घूमते-फिरते हैं, उनकी भ्रमनायें हैं जिनसे वे बनाते हैं, मिटाते हैं, दूर भी देखते हैं। चमकीले रूप उन देवताओं के होते हैं जो आपको प्रोत्साहन देने आते हैं। अनेक शक्तियाँ अनेक रूपों में व्यक्त करती हैं अपने को। आप उनका आदर्श ढंग से आदर करें, उनकी पूजा करें। मानस-पूजा करें—जब वे दर्शन दें। देवदूत मानस या अतिमानस पटल पर आते हैं, दर्शन देते हैं। उन्हें नमस्कार करें।

**कभी-कभी आप अपने इष्टदेव से अदृश्य सहायता पाते हैं** जब आप स्थूल से सूक्ष्म क्षेत्र में फेंक दिये जाते हैं। ये ही अदृश्य शक्तियाँ आपको देह-भाव से उठाकर ऊंचे क्षेत्रों में आसीन करती हैं। आप इन पर गौर करें, ध्यान दें। सदा इन्हीं दृश्यों में अपने को न भुलावें। आप लक्ष्य पर, ध्रुव पर दृष्टि दें। जब आप सोने को उद्यत होते हैं तो ये ज्योतियाँ स्वतः आपके पास आती हैं। आप ऊँघने लगते

हैं। सुबह नींद खुलने के पहले भी ये वैसे आती हैं बिना प्रयास। कभी-कभी ध्यान में आप नीला आकाश देखते हैं। आप अपने को एक काले धब्बे के रूप में उस आकाश में देखते हैं। आप ज्योति के केन्द्र में अपने रूप को पाते हैं---नाचते, चमकते। आप वहीं ऋषियों, सिद्धों, माताओं के तेजोमय रूप को भी देखते हैं।

**प्रभु आपको आलोक दें।**

## मंत्र योग

ध्वनि की आकृति हैं शब्द।

शब्द अक्षरों से बने हैं।

अक्षरों का विनाश नहीं होता।

अत: शब्द भी अविनाशी हैं।

स्थूल शरीर नाशवान है।

सूक्ष्म शरीर प्रलयकाल तक रहता है।

कारण-शरीर तो शाश्वत है हीं।

मनु ने जो मूल शब्द लिए वे देववाणी हैं।

वैदिक मन्त्रों में प्राप्त हैं।

संस्कृत का इनसे सीधा सम्बन्ध है।

## मंत्रो का व्यवहार

**निम्न कार्यों में होता है :—**

१. मुक्ति

२. व्यक्त देवताओं की पूजा

३. देव–पूजा

४. देव–सम्पर्क

५. अपौरुषेय चैतन्य के हेतु

६. पितृ और देवताओं का भोजन

७. भूत–प्रेत से सम्पर्क

८. विघ्न-निवारणार्थं

९. दुष्ट को भगाने में

१०. रोग—मुक्ति के हेतु

११. औषधिमय जल में

१२. पौधे, मानव के विद्वेषण हेतु

१३. विषहरण हेतु

१४. दूसरों के विचारों को प्रभावित करने हेतु

१५. मानव, दानव को वश में करने हेतु

१६. संस्कार द्वारा मानव को दिव्य बनाने हेतु

देवता का सूक्ष्म शरीर मन्त्र हैं।

मन्त्र गुरु से प्रकट होते हैं।

देवता मन्त्र से प्रकट होते हैं।

अतः गुरु इष्टदेव के पितामह हैं।

पितामह या पिता की, की गई सेवा

से पुत्र या पौत्र प्रसन्न होते हैं, वैसे ही

गुरु की सेवा से मन्त्र प्रसन्न होते हैं,

मंत्र की सेवा से देवता प्रसन्न होते हैं,

गुरु और मंत्र की सेवा से देवता प्रसन्न होते हैं

'अ' से 'क्ष' तक सरस्वती की वाणी है।

सरस्वती की अक्षमाला भी है।

बीज, अंकुर, जड़, डंटी, धड़, शाखायें कोंपल, पत्तियाँ फूल और

फल—मन्त्र ये सभी रूप धारण करता है।

दीक्षा में बीज देते हैं सद्गुरु।

बीज से वृक्ष रूप मिलता है।

संध्या डंटी है, गायत्री धड़ है, न्यास शाखायें है,

पूजा कोंपल है, स्तुति पत्तियाँ हैं, हवन फूल है और कवच फल

हैं—मन्त्र वृक्ष के।

## साधक का शरीर

",मात्र भौतिक शरीर नहीं होता है।
उस महारानी का सनातन निवास होता है।
जो सभी तीर्थों की स्वामिनी है।
जो गिरे हुओं को उठाती है।
तीनों लोकों को मुक्ति देती है।
हे देवि, इन अक्षरों में सभी धर्म हैं,
सभी पुण्य हैं, सभी ज्ञान हैं
और ब्रह्मानन्द भी इन्हीं में हैं"

**—शिवजी, 'महानिर्वाण' में**

## उच्चारण

उत् चरण है। ऊपर चलाना है अपने को।
अति मानस क्षेत्र में चलते हैं आप।

## शब्द ब्रह्म

कुण्डलिनी का व्यक्त रूप है—कवि, काव्य, आलाप, आमोद, तेरी।

## अनुभव की रीति

आप जिस अवस्था में होते हैं अनुभव वैसा ही होता है।
**जाग्रत में**—स्थूल नाम और रूप आते हैं।
**स्वप्न में**—मन की रचना के नाम रूप पाते हैं।
**सुषुप्ति में**—देह से पहचान नहीं। अनुभव नहीं।
**तुरीय में**—ब्रह्म एवं सब ऐक्य।
आप आत्मा में होते हैं।

## आनन्द

आपका स्वाभाविक गुण है।
आत्म—**साक्षात्कार** से आप इसे पाते हैं।

**सद्गुरु के बताये ध्यान से आप** पाते हैं।

**बाधा**—सिर्फ मन की आदतें हैं।

**उपाय**—शास्त्र और संतों की कृपा है।

## ज्ञान-मार्ग

योग और ज्ञान दोनों में ध्यान सहायक है।

योग हमें शाश्वत सत्य से मिलाता है।

ज्ञान यह खोजता है कि सत्य से हम अलग कैसे हुये ?

## कर्म

आत्मा का बाधक नहीं है।

अतः कर्मयोग **निष्काम** हो तो आत्म-साक्षात्कार का बाधक नहीं।

## समाधि

१. आँखें बन्द हों तो **निर्विकल्प** है।

२. ,, खुली हों तो **सविकल्प** है।

३. सदा वर्तमान हो, **साधक** है।

## एकांत

**साधक निष्काम हो तो सदा एकांत है।**

## मौन

**दक्षिणा-मूर्त्ति** मौन गुरुओं के आदर्श हैं।
दृश्य-विलय ही दृक् को लब्ध है।
सत्य बचा रहता है।

## मन का चैन

१. **विचार**

२. **वैराग्य** एवं

३. **एकाग्रता**

**—से** मिलता है।

ॐ

ज्ञान—अभ्यास शून्य है।

अभ्यास—ज्ञान शून्य है।

ध्यान—अभ्यास-ज्ञानमय है।

बिना ज्ञान के अभ्यास श्रेयष्कर है।

ज्ञान सहित अभ्यास उससे भी श्रेष्ठ है।

निष्काम कर्म दोनों से बड़ा है।

आत्म-निवेदन दोनों से बढ़कर है।

यह भक्तियोग है।

आत्मा यथावत् रूप में सबोंको उपलब्ध है। इसकी अनुभूति समाधि है। वासना रहित होने से आत्म-प्रकाश पाते हैं। ज्ञानी किसी भी कर्म से विचलित नहीं होते।

अहंकार हटेगा, प्रकाश मिलेगा।

ॐ

## नाद पर ध्यान

अधिकारी करते हैं।

सीधा रास्ता मानते हैं इसे।

बच्चों को सुलाने के लिए उन्हें लोरी सुनाते हैं।

वैसे ही समाधि के पहले नाद कर्णप्रिय लगता है।

जैसे कोई राजा अपने पुत्र की दूर यात्रा

से आगमन की बात सुनकर गायक

को बाजों के साथ अगवानी के लिए

भेजता है वैसे ही भक्तों को प्रभु

के महल में जाने के पूर्व

नाद सुन पड़ते हैं। नाद से ध्यान लगता है।

नाद श्रवन + विचार = तन्मय + चिन्मय

**चित्** = पूर्ण

महत् — ज्योति विस्तार (अंकुर)

अहंकार — सीमित अहं (जीव)

मानस — मन

अहं (देहभाव) — इदं (संसार भाव)

**पर** — पूर्ण

ईश्वर — महत्

जीव (व्यष्टि चैतन्य) — जगत् (संसार)

## मन की परीक्षा

**चित्तवृत्तिनिरोध**—योग की सभी प्रणालियों में लागू कर सकते हैं।

**लक्ष्य की ओर जब तक उद्यम जारी है :**

**योग है।**

यह निरोध कई प्रकार से हो सकता है।

(१) **मन की परीक्षा लें**—परीक्षा के समय मन इधर उधर भटकना छोड़ देता है। ज्ञानमार्ग है।

(२) **मन के उद्गम स्थान खोजें—भगवान** या चैतन्य या आत्मा है।

(३) **एक विचार पर ध्यान से**—अन्य सभी विचार भाग जाते हैं। फिर वह विचार भी हट जाता है।

(४) **हठ योग से।**

## गुरु

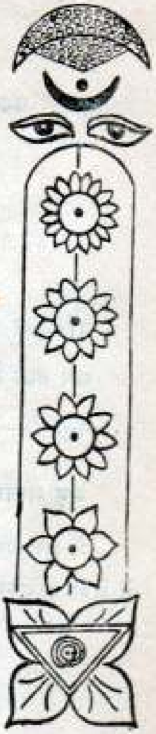

**ईश्वरोगुरुरात्मेति—जो भगवान है**
**वही गुरु है**
**वही आत्मा है।**

आप असंतोष से चले थे।
संसार से खुश न थे। आपने प्रार्थना की।
आपका अन्त:करण निर्मल हुआ।
कामनाओं से आप ऊपर उठे।
आपने प्रभु को जानना चाहा। पहचानना चाहा।
तब भगवान की कृपा प्रकट होने लगी।
भक्त को कृपा झलकने लगी।
कृपा ने सत्य का सबक सिखाया।
शिक्षण और सम्पर्क से शुद्धि हुई।
मन को बल मिला। अन्तर्मुखी हो गया।
ध्यान लगा—मन परम पवित्र हो गया।
शान्त हुआ। वही शान्ति आत्मा है।
गुरु बाहर और भीतर दोनों जगह हैं।
बाहर से मन को भीतर धकेलते हैं। भीतर से वह मन को आत्मा की ओर खींचते हैं। शान्त पद देते हैं। यही कृपा है। एक हैं तीनों।

## आत्म-उपलब्धि में विलम्ब के कारण

(१) **स्वकण्ठाभरण यथा**—अपनी गर्दन में कण्ठहार है, मिलता नहीं।
(२) **दशमा**—वे दशमूर्ख जो अपने को छोड़कर नौ की हीं गिनती करते थे।
(३) **शेर का बच्चा**—जो बकरों की जमात में पाला गया।
(४) **कर्ण**—को जब वास्तविक पिता का पता चला।
(५) **राजपुत्र**—जो नीच जाति के घर में पाला गया।

ये चार कहानियाँ है।

## निरन्तर ध्यान

**सदा सर्वदा अखण्ड ध्यान—**

**निमिषार्द्धं न तिष्ठन्ति, वृत्ति ब्रह्ममयी विना**
**यथा तिष्ठन्ति ब्रह्माद्या सनकाद्याः शुकादयः**

**तेजोबिन्दुउपनि० १४—७**

प्रतिबन्ध और अनुशासन व्यक्तिगत साधक के लिए हैं, मुक्त के लिये नहीं। मन क्या है—विचारों का गट्ठर। कहाँ से आया ?—आत्मा से। विचार सत्य नहीं ?—सत्य आत्मा ही है।

**भृगु गीता में है :—**

मैं सदा स्थिर रहता हूं। अनेको ब्रह्माण्ड आकार धारण कर विचारों के रूप में मेरी परिक्रमा करते हैं। यही **प्रदक्षिणा है।**

## समष्टि और व्यष्टि

| | समष्टि | | व्यष्टि |
|---|---|---|---|
| स्थूल— | | संसार— | —शरीर |
| सूक्ष्म— | | ध्वनि + ज्योति | —मन + प्राण |
| मूल— | | आत्मा— | —आत्मा |
| | | परं | परं |

## भिखारी शिव

### प्यासा पानी

शिव ने अपना सर्वस्व विष्णु को दे दिया कि वे राजपाट चलायें—स्वयं जंगलों में भिक्षाटन करने रहे। **आनन्द**—कुछ नहीं रहने में मिला। चिन्ता नहीं रही।

## श्रवण

स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर—अनात्म हैं।

आत्मा का "मैं" इनसे निराला है। जैसे अविद्या से बन्धन रहता है, वैसे ही ज्ञान से मुक्ति होती है।

**गुरु से यह जानना ही श्रवण है।**

## मनन

पञ्चकोशों के त्रिविधि शरीर को असार मानना—सूक्ष्म अनुसन्धान "मैं क्या हूँ"—उसे सदा तत्त्वमसि में लगाना है।

**गाढ़ा ध्यान है।**

गुरु द्वारा शिष्य को "तत्त्वमसि" बताना—**उपदेश** है।

तब शिष्य **असीम सौन्दर्य** में डूबकर अनुभव करता है—अहं **ब्रह्मास्मि**।

## निदिध्यासन

**मन-मंथन है।**

**आत्मानुसंधान है।**

**'ब्रह्मास्मि'** और **'ब्रह्मं व अहं'**—तक मन को पहुँचाना है। आत्मा में निरन्तर रहना है।

भक्ति—योग—ध्यान भी यही है।

मन-मथानी — मंथन से मक्खन—

हृदय-दधि — संघर्षण से अग्नि—

आत्मा में निरन्तर अभ्यास } मंथन

**अखण्ड तैलधारावत्** आनन्द-स्वाभाविक हो जाता है—शीघ्र-अबाध सीधा-ब्रह्मानुभूति—देशकाल में व्याप्त।

हृदयग्रंथि कट जाती है—संशयहीन हो जाते हैं, कर्मबन्धन कट जाते हैं।

**असीमानन्द** व्याप्त रहता है।

## जीवन्मुक्त

मुक्ति का अखण्डानन्द जिन्हें मिल रहा हो, संचित-आगामी और प्रारब्ध—त्रिविध कर्मों से जो परे हों,

जो स्वानुभव से परिपूर्ण हो,

संशय और द्वन्द्व से जो परे हों,

वे शरीर रखते हुए भी जीवन्मुक्त हैं।

जिन्हें सिर्फ इनका सैद्धान्तिक ज्ञान है
और व्यावहारिक ज्ञान नहीं— } वे मुक्त नहीं हैं।

प्रत्यक्षानुभूत शाश्वत है, गुरु द्वारा लायी कोई नई वस्तु नहीं।

## धीर

ज्योति पाते हैं।

धी=बुद्धि — बुद्धि की निगरानी करनेवाले

र=रक्षण — बुद्धि का रक्षण करनेवाले

जिनका मन सदा अन्तर्मुखी है वे ही धीर हैं।

## तुरीय

जाग्रत—

स्वप्न—

सुषुप्ति—

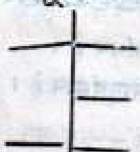

तुरीया चौथी नहीं है बल्कि तीनों का आधार है। तीनों अवस्थाओं की सारी घटनायें इसी के सहारे होती हैं यह किसी से कभी पृथक नहीं है।

यही एकमात्र सत्य है।

यह आत्मा का दूसरा नाम है।

आत्मा यहाँ और अभी है—यही सत्य है।

अविद्या हटाने के लिए अभ्यास करते हैं।

भगवान में सदा बैठे रहना ही आसन है।

शास्त्र सिर्फ मुमुक्षुओं के लिए है।

मूर्ख उन्हें समझेंगे ही नहीं।

ज्ञानी स्वयं सब जानते ही हैं।

जब तक प्रयास है, उपासना है।

प्रयास बन्द हुआ—ज्ञान है।

## तत्वमसि

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| तत् | = | ईश्वर | } | सब का |
| त्वं | = | जीव | } | आधार है |
| असि | = | है | } | तुरीया |

| | | |
|---|---|---|
| सर्वं व्यापकत्व | = \| = | जाग्रत |
| सर्वं प्रकाशत्व | = \| = | स्वप्न |
| अनन्त | = \| = | सुषुप्ति |

तीनों का आधार— तुरीया है।

## प्रत्यभिज्ञा

अभिज्ञा = सीधा अनुभव है।

प्रति = याद दिलाना है उसकी जिसे जानते हैं पहले से।

यह हाथी है = अभिज्ञा है

यह वही हाथी है—प्रत्यभिज्ञा है

सदा सर्वदा अखण्ड सत्य की अनुभूति और पहचान ही प्रत्यभिज्ञा है।

ध्यान आपको सत्य में लगाये रहता है—अन्य भावों को दबाकर।

जाग्रत—सुषुप्ति = समाधि है।

आनन्द उमड़ रहा है; अनुभूति स्पष्ट है।

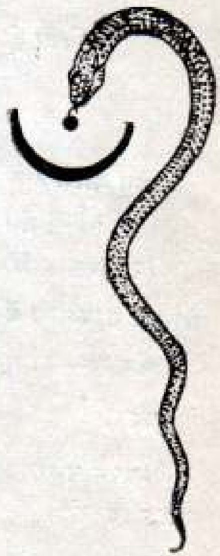

ध्यान ◡
|
आपका ०
|
आप से ० ०
|
आप में ◡

अतः आप ध्यान-केन्द्र हैं।

## तीन दृष्टिकोण संभव

**व्यावहारिक**—जाग्रत, जीव, ईश्वर

**प्रतिभासिक**—मात्र जीव (ऋषि)

**पारमार्थिक**—अजातवाद

**अद्वितीय**

न सृष्टि
न लाभ
न खोज
न बंधन
न मुक्ति

**गीता**—६।३५/६।२५
४।२४/६।२६

अविद्या ही विक्षेप का कारण है।

## योग-हृदय

**योग वाशिष्ट में दो हृदय कहा है।**

(१) संवित् है।

(२) रक्त वाहिनी है।

**ललिता सहस्त्रनाम में**—अनाहत् और हृत् अलग-अलग हैं।

**कैवल्य**—का एक श्लोक है :—

हे गुरुदेव,

आपने अनेक जन्मान्तरों से मेरी रक्षा की है; जब तक मैं मुक्त हुआ आप सदा साथ रहे।

**अवसर आने पर आत्मा ही गुरु रूप में व्यक्त हो जाता है;**

अन्यथा वह भीतर से ही अपना उचित कार्य करता रहता है।

ज्ञानी का मन सिर्फ ज्ञानी ही जान सकते हैं।

## रसास्वादन

विवाह काल में दुलहिन प्रसन्न है।

**वर से भेंट अभी नहीं है। कोहबर बाँकी है।**

## मौन-दीक्षा

सर्वश्रेष्ठ है। अद्वैत की चरम अभिव्यक्ति है। वह अपने शिष्यों को सिखाता है मौन द्वारा, पर अपने शिक्षक होने का दम्भ नही भरता।

## जीवन मुक्तों का जीवन

बाहर से प्रारब्ध आदि कर्मों से उसका जीवन भले ही बँधा हुआ प्रतीत हो पर वह आकाश की भाँति निर्मल होता है। आकाश सदा साफ रहता है पर हवा द्वारा बादल मँडराते रहते हैं। वह सदा **आत्मा में** हीं रहता है। प्रिय स्त्री जैसे अपने पति में सदा रमी हो। वह मूर्खों की भाँति, जड़ की भाँति शान्त रहता है। वह वेदों में मगन रहता है–मौन रहकर ही शिक्षा देता है। वह जानता है कि गुरु और शिष्य का भेद माया के मोहक आवरण के ही कारण है। वह आकाशवाणी बोलता है। कभी उन्मत्तों की भाँति बोलता है। उसके अनुभव शब्दों से परे होते हैं। प्रेमी अपने प्यारे को जैसे छाती से लगाकर मस्त रहता है, वैसे ही वह सदा मगन रहता है। कभी-कभी महान् वक्ता की भाँति भाषण करता है। वे शब्द उसकी विगत अनुभूतियों के प्रमाण रहते हैं। वह सदा **अद्वैत शान्त** में रमण करता है। वह आप्तकाम होता है, उसकी सारी कामनायें पूर्ण हो चुकी रहती हैं।

वह बाहर से भले ही त्रस्त और दुःखी जान पड़े, परन्तु अपनी इन्द्रियों और मन पर विजय प्राप्त कर चुके होने के कारण वह भीतर से प्रशान्त होता है, ब्रह्ममय रहता है। जब कभी वह संसार में लिप्त जान पड़ता है तो इसी कारण कि बाहर से उसपर कुछ लाद दिया गया है' भार दे दिया गया है। यदि यह दीख पड़े कि वह स्त्री–सहवास कर रहा है तो यही समझना है कि दिव्य–चेतना या प्रभु की इच्छा ने ही मानवीय स्तर पर उसके माध्यम से ही ऐसा नाट्य किया है। इसमें तनिक भी संशय नहीं होना है क्योंकि वह जीवित भी है और मुक्त भी। वह सिर्फ विश्व कल्याण के लिए जीवित रहता है। एक उदाहरण है।

## परीक्षित का जन्म

ज्ञानी को पहचानने में भूल नहीं है। परीक्षित जन्मकाल में मृतवत् मौन थे, शान्त थे। लोग मरा बच्चा देखकर विकल थे। स्त्रियाँ रोने लगीं। श्रीकृष्ण से कहा कि "बच्चा को बचा दीजिये"। ऋषि-मुनि अनेक वहाँ एकत्र थे। सोचते थे— देखें कृष्ण कैसे इनकी रक्षा करते हैं। कृष्ण ने कहा—"कोई नित्य ब्रह्मचारी

इसे स्पर्श करे तो बालक जीवित हो उठेगा"। शुकदेवजी जैसे मुनि ने भी बच्चे को छूने का साहस नहीं किया। मुख्य संतों या मुनियों में जब किसी ने भी बालक को स्पर्श करने का साहस नहीं किया तो कृष्ण स्वयं आगे बढ़े और उस बालक को स्पर्श कर कहा—"यदि मैं नित्य ब्रह्मचारी हूँ तो यह बच्चा जीवित हो जाय।" बस, क्या था! बच्चा श्वास लेने लगा और बढ़ने पर वही **परीक्षित** हुआ। भला सोचिये, १६,००० गोपियों से घिरे रहनेवाले कृष्ण कैसे ब्रह्मचारी थे। यह **जीवन्मुक्ति** रहस्य है। जीवन्मुक्त वही है जो कभी भी आत्म-स्वरूप से विलग नहीं रहता।

## सच्चिदानन्द

**सत्**—सत् और असत् से परे का भाव है।

**चित्**—चित् और अचित् से परे हैं।

**आनन्द**—आनन्द और नहीं-आनन्द से परे का भाव है।

## अविद्या

य न विद्यते स अविद्या।

जो नहीं है वह अविद्या है।

## त्रिगुण

सत्व—ज्योति है—ऊपर आती हुई।

रज—देखनेवाला।

तम—दीख पड़नेवाला।

## अज्ञान

दो रूपों में आता है। (१) आवरण—सत्य छिपा हुआ।

(२) विक्षेप—कार्यरत में विरोधाभास।

आवरण हटा—**सत्य है**।

# श्री निरञ्जन ग्रंथ माला के पुष्प

१. श्री पादुका दशकम्—लेखक महात्मा श्री "निरंजन"

२. श्री भवानी शतक ( हिन्दी ) ,, ,,

३. Bhavani ( श्री भवानी शतक का अंग्रेजी अनुवाद )
Dr. Suryakant Thakur

४. भवानी शतक ( बंगला )—श्री सीतेश चन्द्र सिन्हा, एम० ए० बी० टी०

५. मातृ भूमि वन्दना ( कच्छी ) महात्मा "श्री निरंजन"

६. ,, ( गुजराती ) ,,

७. ,, ( हिन्दी ) ,,

८. मातृ-भूमि वन्दना ( संस्कृत पद्यानुवाद )
श्री वटुक नाथ शास्त्री खिस्ते एम० ए० साहित्याचार्य

९. ,, ( मराठी ) ,,

१०. ,, ( बंगला ) श्रीमती सुनीति देबी मित्रा, एम० ए० बी० टी०

११. Matri Bhumi Vandana ( English )
Dr. Suryakant Thakur

१२. Matri Bhumi Vandana ( French )
—Bhikshu Arya Deo (Mr. Adempawl)

१३. ,, ( Russian )

१४. महावाक्य पञ्च शती ( हिन्दी टीका सहित ) महात्मा श्री "निरंजन"

१५. श्री गुरु पादुका दशकम् ( संस्कृत टीका )
—पं० मुरारीलाल गोस्वामी, काव्य पुराण तीर्थ आयुर्वेदाचार्य्य

१६. पादुका दशकम् ( हिन्दी टीका सहित ) —डा० सूर्य्यकान्त ठाकुर

१७. **पादुका-दशकम्** ( अंग्रेजी कामेन्टरी सहित )

डा० बी० एस० अग्निहोत्री, एम० ए० पी० एच० डी०

१८. **आगम रहस्य** ( हिन्दी ) —पं० जगदीश्वरी प्रसाद ओझा

१९. **Aagam** ( English ) —Dr. Suryakant Thakur

२०. **मन ने उपदेश** ( समर्थ रामदास के मराठी मना चे श्लोक का गुजराती पद्यानुवाद

स्व० श्री कल्याणजी लालजी व्यास 'श्रेयस

२१. **परमात्म-प्रकाश** ( दिगम्बर जैन महाग्रन्थ का गुजराती पद्यानुवाद )

महात्मा श्री 'निरंजन

२२. **'निरञ्जन' ज्यूं काव्यु** ( कच्छी ) महात्मा श्री 'निरंजन

२३. **मातृ भूमि वन्दना** ( मैथिली ) श्री रामचरित्र पांडे 'अणु' एम० ए०

२४. **दिव्य-वाणी** —प्र० सं०—श्री सूर्यकान्त

२५. **शिवाष्टकम्** —ले० महात्मा—श्री निरञ्जन

२६. **श्री हृदय** —संकलयिता—श्री सोमानन्द

२७. **माध्वी** —रूपान्तरकार—श्री सोमानन्द

२८. **…मोहि ब्रज बिसरत नाहि** —रचयिता—श्री सोमानन्द

२९. **मधुमती** —संचयिता—श्री सोमानन्द

३०. **श्री ललिता सहस्त्र नाम भाष्य** —टीकाकार—श्री सोमानन्द

३१. **श्री भवानी शतक का भाष्य** —टीकाकार—श्री सोमानन्द

३२. **शिवार्चन** —रूपान्तरकार—श्री सोमानन्द

३३. **श्री ललित त्रिशती भाष्य** —रूपान्तरकार—श्री सोमानन्द